हिन्दू-त्योहारों का इतिहास।



लेखक-

हिन्दू त्यौहारों का इतिहास।

समस्त जरूरी त्यौहारों की उत्पत्ति और
उनके सम्बंध में प्रसिद्ध आख्यायिकाओं
का अपूर्व संग्रह।

लेखक—

श्रीयुत शीतला सहाय जी, बी. ए.

भूतपूर्व सम्पादक 'भविष्य' और
'स्वराज' वगैरह

—:o:—

प्रकाशक—
"चांद" कार्यालय,
इलाहाबाद।

सितम्बर, १९२४

प्रथम संस्करण २०००] [मूल्य बारह आने।

प्रकाशक—
"चांद" कार्यालय,
इलाहाबाद।

मुद्रक—
श्रीविजय कृष्ण शुक्ल
माधव प्रिन्टिंग प्रेस
७।१, बाबूलाल लेन,
कलकत्ता।

उपहार

सप्रेम

श्रीयुक्त

प्रकाशक का निवेदन।

हिन्दू समाज में त्योहारों का बड़ा मान है। हमारा तो ख्याल है कि भारतवासी जिस भक्ति और श्रद्धा से अपने त्योहार मानते हैं शायद भूमण्डल की कोई भी जाति अपने त्योहारों को इतना महत्व न देती होगी—खासकर भारतीय स्त्रियां लेकिन यह बात स्पष्ट है कि ६८ प्रति शत स्त्री पुरुष इन त्योहारोंकी उत्पत्तिके सम्बन्ध में बिलकुल अनभिज्ञ हैं। वे न तो इनकी उत्पत्ति का कारण ही जानते हैं और न उनका महत्व ही! यद्यपि विषय इतना जरूरी है किन्तु हिन्दी भाषा में ऐसी एक पुस्तक भी हमारे देखने में नहीं आई!

वर्त्तमान पुस्तक के सुयोग्य लेखक ने महीनों कठिन परिश्रम करके और भांति भांति की धार्मिक पुस्तकों का अध्यन करके ही लेखनी उठाई है। वे किस उत्तमता से और कितनी सरल भाषा में यह पुस्तक हिन्दी संसार में उपस्थित कर सके हैं सो पाठक पाठिकायें देखेंगी ही। प्रेस सम्बन्धी कई भूलें भी रह गई हैं इनके लिए हमें वास्तव में दुःख है। कारण यही था कि यह पुस्तक कलकत्ते में छपी और इसका प्रूफ वगैरह नहीं पढ़ा

गया। आगामी संस्करण में वे सुधार दी जावेंगी तथा अन्य कई बाते और भी बढ़ा दी जावेंगी।

इस बार जो कुछ भी हो सका पाठकों की सेवा में अर्पित किया जा रहा है यदि पुस्तक उपयोगी सिद्ध हुई तो लेखक तथा प्रकाशक दोनों ही अपने परिश्रम को सफल समझेंगे।

चांद कार्यालय; इलाहाबाद
१ ·६—२४

—विद्यावती सहगल

विषय सूची

--:0:

॥ श्री ॥

हिन्दू त्योहारों का इतिहास ।

एकादशी ।

हर मास में दो दफ़ा होती है। यह प्रत्येक पाख के ग्यारहवें दिन पड़ती हैं। साल के हर एक महीने की एकादशियों के माहात्म्य और उन की उत्पत्ति के कारण जुदा जुदा हैं। एकादशी का व्रत निर्जल भी होता है और सजल भी; रात्रिको जागरणका भी विधान है।

एकादशीकी उत्पत्तिका कारण।

भविष्य पुराण में यह बताया गया है कि, सतयुग में मुर नाम का एक दानव हुआ था। इस दानव ने समस्त देवताओं को हरा दिया। इन्द्र को भी इन्द्रासन से गिरा दिया। इस पर तमाम देवता दुखी होकर पृथ्वी पर फिरने लगे। इन्द्र ने देवताओं की यह बुरी अवस्था देख कर शिवजी से सारा वृत्तान्त कह सुनाया। शिवजी ने देवताओं को विष्णु के पास जाने की सलाह दी। देवताओं ने विष्णु से क्षीरसागर में मुलाकात की और उन से सहायता मांगी। विष्णु को देवताओं की दुर्दशा का हाल सुन कर क्रोध आगया और मुरसे लड़ाई करने को तैयार हो गये। विष्णु ने अपने बाणों से तमाम दैत्यों को मार डाला किन्तु मुर को न हरा सके। उन्हों ने अपने शस्त्रों को मुर के शरीर पर बिलकुल निष्प्रभाव देख कर यह निश्चय किया कि मुर से मल्ल युद्ध किया जाय। विष्णु और मुर में एक हजार वर्षतक मल्ल युद्ध जारी रहा। एक हजार वर्ष के मल्ल युद्ध से थक कर विष्णु रणक्षेत्र से भाग निकले और बदरिकाश्रम में जाकर एक गुफा में जाकर सो गये। मुर ने विष्णु का पीछा किया ढूंढ़ते २ बद्रिकाश्रम में पहुंचा। यहां विष्णु को सोते हुए देखकर उसने यही विचार किया कि अब विष्णु को मार ही डालना चाहिये। मुर की इस दुर्मति को देख कर विष्णु के शरीर से एक महातेज युक्त कन्या उत्पन्न हुई। वह देवी अच्छे अच्छे शस्त्र लेकर मुर से युद्ध करने के लिये उपस्थित हो गई। उस देवी ने थोड़ी ही देरमें

उस दानव को रथ विहीन कर दिया। तब वह दैत्य भुजाओं से युद्ध करने के लिये दौड़ा किन्तु देवी ने हाथसे दैत्य के हृदय के बीच में प्रहार कर के नीचे पटक दिया और उसका सर काट डाला। बचे बचाये दैत्य पाताल भाग गये। इतने में भगवान विष्णु की निद्रा भंग हुई तो देखते क्या हैं कि दैत्य मरा पड़ा है और एक कन्या सामने हाथ जोड़े खड़ी है। भगवान विष्णु ने आश्चर्य में हो कर उस कन्या से सब हाल पूछा। कन्या ने बताया कि मैं आप के शरीर से उत्पन्न एक शक्ति हूं। इस दैत्य के मन में आप के मारने के विचार को सुन कर मैंने इसे मार डाला। भगवान विष्णु इस बात से बहुत प्रसन्न हुए और कन्या से कहा कि कोई वर मांग। कन्या ने उत्तर में कहा कि यदि भगवान मुझ से वास्तवमें प्रसन्न हैं तो मुझे यह वरदान दीजिये कि जो मेरे निमित्त उपवास करे उसे ब्रह्महत्यादि पापों से मैं तार दूं। जो मेरे नामपर जितेन्द्रिय होकर व्रत करे वह करोड़ कल्प पर्यन्त वैष्णवधाम में जा कर निवास करे और नाना प्रकार के भोग भोगे। एकादशी के दिन कोई भी मनुष्य उपवास या नक्तव्रत या एक समय भोजन करे उसे धर्म और मोक्ष प्राप्त हो। भगवान ने एवमस्तु कहा और कहा कि तू मेरी परमोत्तम शक्ति है, एकादशी के दिन उत्पन्न हुई है इस लिये तेरा नाम एकादशी होगा। जो तेरा व्रत करेगा मैं सब पाप भस्म कर के उसे मोक्ष पद दूंगा।

अगहन महीने कृष्ण पक्षकी एकादशी मुर दानव के मारने के लिये पैदा हुई थी इसका वृतान्त ऊपर दिया गया।

मार्ग शीर्ष शुक्ल पक्षकी

"मोक्षा" नाम्नी एकादशी।

शुक्ल पक्ष के बारे में यह कथा है कि—गोकुल में वैखानस नाम के एक राजा रहते थे। अपनी प्रजा को वह पुत्र के समान पालते थे। एक दिन राजा ने स्वप्न में देखा कि उसके पिता नरक में पड़े हैं और उसे कह रहे हैं कि मेरा उद्धार करो। इसे देख उन्हें बड़ा दुःख हुआ और उन्होंने प्रातः काल उठ कर अपने दर्बार के पण्डितों से अपना स्वप्न सुनाया पण्डितोंने राय दी कि थोड़ी ही दूर पर एक पर्वत ऋषि का आश्रम है वहां जाकर सब बृतान्त कहना चाहिये।

राजा पर्वत ऋषि के आश्रम को पधारे और ऋषि के समक्ष जाकर दण्डवत किया। ऋषिने राजा से उनके आने का कारण पूंछा। राजा ने अपने स्वप्न की कथा सुनाई। इस पर थोड़ी देर तक ऋषि ने आंख बन्द कर के ध्यान किया और राजा के पितरों की अधोगति के कारण को जान गये। आंखें खोल कर ऋषि ने कहा कि तेरे पिता के अधोगति को प्राप्त होने का कारण मैं जान गया। वह यह कि तुम्हारे पिता के पूर्व जन्म में दो स्त्रियां थीं। उन में एक का मान तो बहुत रखता था किन्तु दूसरी की जरा भी इज़्ज़त नहीं करता था। उससे केवल विवाह कर लिया था किन्तु उस के साथ स्त्री का व्यवहार नहीं करता था काम पीड़िता उस स्त्री के शाप से तुम्हारा पिता नरक गामी हो

गया है। राजा ने इस पर ऋषि से इस पाप के निवारण का उपाय पूंछा। उन्होंने कहा कि अगहन महीने के उजेरे पाख में मोक्षा नाम की एकादशी होती है। उस एकादशी में विधि पूर्वक व्रत करो तब तुम्हारे पिता का पाप नष्ट हो सकता है। राजा ने अपने नगर में आकर इस एकादशीका व्रत किया जिस के प्रभाव से उसके पिता नरक से स्वर्ग चले गये।

पूष महीनेके कृष्ण पक्षकी

"सफला" एकादशी।

इस एकादशी का नाम सफला है, नारायण इसके देव हैं, जैसे नागों में शेषजी, पक्षियों में गरुड़, यज्ञों में अश्वमेध, नदियों में गंगा और मनुष्यों में ब्राह्मण हैं वैसे ही एकादशी में पूष कृष्ण की एकादशी है। नारियल आमला, दाड़िम, सुपारी, लवंग अगर आदि से इस दिन देव की पूजा की जाती है। इस एकादशी को दीपदान किया जाता है और रात को जागरण भीहोता है।

महिष्मत नाम के राजा की चम्पावती नाम पुरी थी। इस राजाके चार पुत्र थे किन्तु लुयंक नामक ज्येष्ठ पुत्र बड़ा पापी था। पर स्त्रियों से कुकर्म करता, जुवा खेलता वेश्याओं के घर जाता और इस तरह अपने पिता का द्रव्य उड़ाता। इस पुत्र को महिष्मत राजा ने इसलिये अपने राज्य से निकाल दिया। यह लड़का वन में चला गया और उस ने सोचा कि

दिन में जङ्गल में रहूंगा और रात में पिता के यहां चोरी करूंगा। यह सोच कर वह बन को चला गया और बरसों चोरी कर के अपना जीवन व्यतीत करता रहा। लुयंक जहां रहता था वहां एक पीपल का वृक्ष था। एक दिन का हाल है कि सफला एकादशी के दिन इसे कुछ खाने को नहीं मिला और न इस के पास कोई वस्त्र ही शरीर ढंकने को मौजूद था। रात को बहुत जोर से जाड़ा पड़ा जिस के कारण यह चेष्टा रहित हो गया। शीतके मारे उसे रात भर नींद न आई। रात भर दांत कटकटाते ही बीते सूर्योदय होने पर भी लुयंक को होश नहीं आया। ऐसे चेष्टा रहित पड़े पड़े सफला के दिन दोपहर को धूप के लगने से लुयंक को होश आया और भोजन की तलाश में निकला। शक्ति न होने के कारण उसे न तो कोई शिकार मिला न अन्य बस्तु। मजबूर होकर कुछ फल बिन लाया और पीपल के वृक्ष के नीचे डाल कर कमजोरी के मारे गिर पड़ा। इतनेमें शाम हो गई और जाड़ा पड़ने लगा इस पर दुखित हो पीपल की जड़ पकड़ कर वह रोने लगा कि हे पिता! मेरा क्या होगा? इसी अवस्था में वह सारी रात जागता ही रहा। भगवान बड़े दयालु हैं, उन्होंने देखा कि लुयंक ने तो एक प्रकार से सफला एकादशी का व्रत जागरण पूजा इत्यादि सभी कर लिये हैं जिससे प्रसन्न हो उन्होंने इसे निष्कण्टक राज्य दिया। सुवह होते ही उसके पास एक घोड़ा आया और वह लुयंकके सामने खड़ा हो गया। उसी समय आकाशवाणी भी हुई कि—हे राजपुत्र! वासुदेव

भगवान की कृपा से और सफला एकादशी के प्रताप से तुझे निष्कण्टक राज्य प्राप्त हो। उसकी बुद्धि सुधर गई वह अपने पिता के पास आया पिता ने उसकी भक्तियुक्त बुद्धि देख कर उसे राज्य दे दिया। यह सब एकादशी के प्रतापसे हुआ।

पूष शुक्ल पक्षकी

"पुत्रदा" एकादशी ।

इस एकादशी का नाम पुत्रदा एकादशी है। भद्रावती नगरी-का सुकेतुमान राजा था, शैब्या उस की रानी थी। परन्तु उस के कोई पुत्र नहीं था जिस के कारण राजा और रानी दोनों दुखी रहते थे। बिचार करते करते एक दिन आत्मघात करनेका खयाल किया किन्तु आत्मघात की दुर्गति सोच कर के इस बिचार से दूर रहा। एक दिन सुकेतु राजा घोड़ेपर सवार होकर एक गहन बनमें चला गया, पुरोहित आदि किसी को खबर न की। इस जङ्गल में घूमते घूमते दोपहर का समय होगया। भूख और प्यास से राजा का गला सूखने लगा तब इधर उधर डोलता मन में विचार करने लगा कि मैं ने क्या दुष्कर्म किया कि मुझे इतना कष्ट मिला। राजा सोचता हुआ जाता ही था कि उसे एक सुन्दर तालाव दिखाई पड़ा जो कि मानसरोवर के समान चारों तरफ कमलों से भरा हुआ था। मुनि लोग किनारे बैठे वेद पाठ कर रहे थे। राजा ने मुनियों से पूछा कि आप लोग यहां क्या कर रहे हैं? मुनियों ने कहा कि माघ मास आज से पांचवें दिन

आने वाला है और आज पुत्रदा नाम एकादशी है। यह शुक्ला एकादशी पुत्र की इच्छा करने वालों को पुत्र देती है। राजा ने इसपर अपना हाल कह सुनाया। मुनियों ने राजा को उस व्रत के करने की सलाह दी। राजा ने यह व्रत किया जिस के प्रभाव से राजा के एक पुण्यवान पुत्र पैदा हुआ।

——:*:——

माघ कृष्ण पक्ष की

षट्तिला एकादशी।

पूष के महीने में पुष्य नक्षत्र में गोवर ले के उस में तिल और कपास मिला कर गोले बना लेते हैं और होम करने के लिये सुखा लेते हैं। माघ कृष्ण एकादशी को इन गोलों का हवन करते हैं और दिन भर उपवास और रात को जागरण करते हैं। काली गाय या काले तिल का दान इस तिथि पर बहुत शुभ माना गया है। इस एकादशी का नाम षट्तिला एकादशी है। इस एकादशी को तिल से ही स्नान करते हैं, तिल ही अङ्ग में लगाते हैं, तिल ही से होम करते हैं, तिल ही पोने के पानी में डालते हैं तिल ही का भोजन करते हैं और तिल ही दान देते हैं।

पौराणिक कथा।

एक दिन नारद बैकुण्ठ में श्रीकृष्ण के पास गये और उन से जाकर यह पूंछा कि षट्तिला एकादशी का महात्म्य

बताइये। श्रीकृष्ण ने कहा कि पहले मृत्युलोक में एक बहुत व्रत करने वाली ब्राह्मणी थी, उस ने उपवास में और विष्णु भक्ति में अपना शरीर दुर्बल कर लिया था। एक दिन कृष्ण स्वयं भिखारी बन कर इस के दरवाजे गये और भिक्षा मांगी। ब्राह्मणी ने क्रोध करके एक मिट्टी का ढेला इन के खप्पर में डाल दिया। इस मिट्टी के ढेले को ले कर ये बैकुण्ठ चले आये। कुछ दिनों के बाद जब ब्राह्मणी स्वर्ग में आई तो मिट्टी के दान के कारण स्वर्ग में उसे बहुत अच्छा घर रहने को मिला किन्तु उस के अन्दर खाने पीने को कुछ भी न था। इस पर वह श्रीकृष्ण के पास आ कर शिकायत करने लगी—और पूछने लगी कि, जब मैं ने मृत्युलोक में इतनी भक्ति की तो फिर क्यों मुझ को बैकुण्ठ में सुख नहीं। श्रीकृष्ण ने कहा कि इस का कारण तुम्हें देव-स्त्रियां बतायेंगी। देवस्त्रियों से जब उस ब्राह्मणी ने पूछा तो उन्हों ने कहा कि तुम ने षट्तिला एकादशी का व्रत नहीं किया था। इस पर उस ब्राह्मणीने षट्तिलाका व्रत किया और उस के प्रभाव से तुरन्त ही धन धान्य वस्त्र आदि संपदाओं से युक्त हो गई। (भविष्य पुराणसे)

माघ शुक्ल पक्ष की

"जया" एकादशी।

पद्म पुराण में लिखा हैं कि एक समय इन्द्र वृन्दाबन में बहुत आनन्द पूर्वक क्रीड़ा कर रहे थे। हजारों अप्सरायें और गन्धर्व लोग इन्द्र को प्रसन्न करने के लिये वहां नाचते गाते थे। माल्यवान नाम का एक गन्धर्व भी वहां गान कर रहा था। और वहीं पुष्पवती नामकी अप्सरा भी गान कर रही थी। माल्यवान और पुष्पवती दोनों ही एक दूसरे को देख कर मोहित हो गये और एक दूसरे के साथ इशारे करने लगे। इन्द्र के समक्ष गाते तो थे किन्तु दृष्टि एक दूसरे पर रहती थी। थोड़ी देरके अन्दर ही इन लोगों का नाचना गाना संगत के और अप्सराओं और गन्धर्वों के सुरताल से अलग हो गया और इन्द्र की सभा में विघ्न होने लगा। इन्द्र ने इन दोनों को इस प्रकार परवश देख कर और अपना अपमान समझ कर इन लोगों को श्राप दे दिया कि जाओ तुम पिशाच हो। तब ये दोनों हिमालय पर आ पड़े और और पिशाच बन कर भयङ्कर दुःख पाने लगे। पिशाच पने के दुःख के मारे गन्ध, रस, स्पर्श, सब का ज्ञान जाता रहा। न दिन को आराम मिलता था और न रात को नींद आती थी। जाड़ों के मारे दांत कट कटाते पहाड़ की गुफाओं में भ्रमण करते फिरते थे। इसी अवस्था में थे कि "जया" नाम की माघ शुक्ल की एकदशी आई। इस दिन न इन्हें कुछ खाने को मिला और

न पीने को। दुर्बल हो ये एक पीपल के वृक्ष के नीचे जा पड़े। सूर्यास्त हो गया और रात भर भी जाड़ेके कारण जागरण करने लगे। इस तरह इनके अनजाने ही इन दोनों का एकादशी व्रत पूर्ण हो गया। प्रातःकाल उठते ही व्रत के प्रभाव से ही इन दोनोंका पिशाचत्व नष्ट हो गया, जैसे पहले थे वैसे ही हो गये। और फौरन ही इन्द्र लोक को प्राप्त हो गये। इन्द्र को इन्हें आते हुए देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने पूछा कि आखिर किस देवता के प्रताप से तुम ने मेरे शाप का भङ्ग करा लिया? माल्य-वान ने पूरी कथा कह सुनाई और कहा यह "जया" एकदशी का प्रताप है कि मैं आज शाप से मुक्त हो अपने पुराने रूप को धारण कर सका हूं। जो मनुष्य इस व्रतको श्रद्धायुक्त हो के करता है वह पुराण के कथनानुसार करोड़ कल्प पर्यन्त बैकुण्ठ में रहता है।

फाल्गुण कृष्ण पञ्चमी

"विजया" एकादशी।

कथा:—जिस समय रामचन्द्र लङ्कापर आक्रमण करने के लिये बानरों और रीछों की सेना लेकर समुद्र के तट पर पहुंचे तो अगाध समुद्र को देख कर उन्हें बड़ी शङ्का पैदा हो गई कि कैसे ग्राहयुक्त समुद्र को पार किया जायगा। लक्ष्मण ने इस

पर रामचन्द्र को सलाह दी कि आप थोड़ी ही दूर पर बसने वाले मुनि से इस बारे में सलाह कीजिये। राम उस आश्रमवासी मुनि के पास गये औद् अपना वृत्तान्त कह सुनाया। उन्हों ने कहा कि मुझे कोई उपाय इस गम्भीर समुद्र को पार करने का नहीं दिखाई देता। तब मुनि ने कहा कि मैं व्रतों में उत्तम व्रत तुम्हें बतलाता हूं जिस के करने से तत्काल तुम्हारी विजय हो जावेगी। इसके करने से केवल समुद्र ही पार न होगे बल्कि लङ्का पर भी विजय पाओगे। वह व्रत यह है कि फाल्गुण कृष्ण पक्ष की दशमी को सोने, चांदी, तांबे या मिट्टी का एक घड़ा बनवाना चाहिये उस घड़े को भर के उस के ऊपर पीपल, बट, गूलर आम और पाकर के पल्लव रख देने चाहिये। इस कुम्भ के नीचे सातधान्य और ऊपर जौ रखना चाहिये। और उस के ऊपर सोने की लक्ष्मी नारायण की मूर्ति रखनी चाहिये। एकादशी के दिन प्रातःकाल स्नान कर के उसकी पूजा करो, रात भर कुम्भ के सामने बैठ कर जागरण करो, और द्वादशी के दिन उस कुम्भ को जल स्थल में पूजा करो और मूर्त्ति को वेद पाठी ब्राह्मण को देना। इस विधि से अगर सेना सहित तुम व्रत करो तो तुम्हारी सब कठिनाई जाती रहेगी। राम ने ऐसा ही किया और विजयी हुए।

(स्कन्ध पुराण से)

फाल्गुण शुक्ल पक्ष की

"आमलकी" एकादशी ।

इस एकादशी का नाम "आमलकी" एकादशी है। इस के महात्म्य में यह कहा जाता है कि वैदिश नाम नगर में चैत्ररथ राजा रहता था। वह एकदशी का बड़ा भक्त था। फाल्गुण शुक्ल एकादशी आने पर उस ने आंवले के नीचे बैठ कर जल पूर्ण कुम्भ स्थापन कर उसके पास छत्र और जूते रक्खे पास ही परशु-राम की मूर्त्ति स्थापित की और उस की पूजा की। इतने में वहीं एक व्याध आया जो मांस का एक लोथड़ा अपने साथ लिए हुए था। वह बड़ा पापी था किन्तु श्रम की वजह से थक कर आमले के वृक्ष के नीचे बैठ गया और रात भर कथा सुनता रहा जिस के प्रभाव से मरने के बाद उस ने बड़े प्रतापी राजा का श-रीर पाया और बहुत धर्म पूर्वक राज्य करने लगा। एक दिन वह शिकार खेल ने गया; जङ्गल में रास्ता भूल गया और पहाड़ की एक शिला पर जाकर सो रहा। इतने में कुछ म्लेच्छों का झुण्ड आया और उसे सोता हुआ देख कर उसको मारने के लिये तीर भाले आदि फेंकने लगा किन्तु तीर आदि उस के शरीर पर पहुंच कर बिलकुल बेकार हो जाते थे। जब म्लेच्छों ने यह देखा तो औरों के साथ आक्रमण करने का विचार किया। इतने में उस राजा के शरीर से एक सुन्दरी पैदा हुई। वह बड़ी भयङ्कर थी और उस ने उन म्लेच्छों को मार डाला। जब राजा जागा तो उ

स ने शत्रुओं को इस तरह मरा हुआ देखकर बड़ा आश्चर्य किया इतने में आकाशवाणी हुई कि हे राजन्! तुम उस जनम में व्याध थे किन्तु तुम ने शुक्ल पक्ष की एकादशी को जागरण किया था उसी का प्रभाव है कि आज तुम इस प्रकार से अपने शत्रुओं पर विजयी हुए हो।

चैत्र कृष्ण पक्ष की

"पाप मोचनी" एकादशी।

इस का नाम "पाप मोचनिका" एकादशी है। इस के बारे में यह कथा है कि एक समय बसंन्त ऋतु में चैत्ररथ नाम के बन में इन्द्र अप्सराओं और गन्धर्वों के साथ आनन्द करते थे। उसी समय बन में ऋषि मुनि अपनी २ तपस्या में रत थे। मुजघोषा नाम अप्सरा ने वहां पर तप करने वाले मेधावी नाम मुनि को अपने बश मे करने का विचार किया और मुनि के समीप जाकर अच्छे अच्छे वस्तु और आभूषणों को पहन मधुर स्वर से वीणा पर गाने लगी। मेधावी का चित्त विचलित हो गया ओर दोंनो कामासक्त हो एक दूसरे के साथ रहने लगे। मुनि ने अपनी तपस्या को तिलांजलि देदी और अप्सरा इन्द्रलोक को नहीं गई। दोनो इसी तरह बहुत काल तक रहते रहे। जब जब अप्सरा देवलोक जाने की इच्छा प्रगट करती तब २ मुनि उसे यह कह कर रोक लेते कि कल जाना। एक दिन अप्सरा ने कहा कि महाराज

आप का कल कितना बड़ा है। इसपर मुनि को कुछ विचार पैदा हुआ इन्हों ने ध्यान करके देखा तो मालूम हुआ कि इस अप्सरा के साथ रहते इन्हे ७५ वर्ष व्यतीत हो गये। मुनि को इस बात पर बड़ा क्रोध आया और उन्हों ने इसे यह शाप दिया कि तू पिशाचिनी हो। अप्सरा ने दुखित हो पूछा कि आप ने शाप तो दे दिया यह तो आपके साथ रहने का मुझे फल मिला किन्तु अब बताइये कि इस शाप का प्रतिकार क्या है? इस पर मुनि ने कहा कि चैत के महीने की एकादशी तुम्हारा शाप नाश करेगी। इस के बाद मेधावी अपने पिता के आश्रम में आया और उसने अपने पतन होने का पूरा वृन्तान्त कह सुनाया। उस के पिता च्यवन ने कहा, बेटा तुम ने बुरा तो किया किन्तु जाओ चैत की "पाप मोचनी" एकादशी का व्रत करो इससे तुम्हारे सब पाप नाश हो जांयगे। (भविष्योत्तर पुराणसे)

चैत्र शुक्ल पक्ष की

"कामदा" एकदशी।

इसका नाम कामदा एकादशी है। इसका माहात्म्य बाराह पुराण में यह बताया गया कि, एक बार नागलोक में पुंडरीक राजा रहता था। उस के यहां गन्धर्व और किन्नर सभी मौजूद थे। एक दिन इस के सामने ललित नाम का गन्धर्व गान कर रहा था उसे अपनी स्त्री ललिता का गाते गाते ही खयाल आ

गया जिस से उस के ताल और स्वर में विघ्न पड़ने लगा। कर्कर नाम के नागने यह बात पुंडरीक राजा से कह दी। इस पर पुंडरीक राजा ने अप्रसन्न हो कर ललित को राक्षस हो जाने का शाप दिया। राजा के शाप से ललित राक्षस हो कर फिरने लगा। ललिता भी उसके साथ फिरने लगी। उस की दुर्दशा देख देख उसकी बुरी हालत होती जाती थी। अन्त में ललिता विचरते २ विन्ध्याचलके शिखर पर ऋष्यमूक ने चैत्र शुक्ल पक्षकी एकादशी का व्रत करने की सलाह दी और इसी व्रतके प्रताप से ललित फिर गन्धर्व रूप को प्राप्त हुआ।

वैसाख कृष्ण पक्ष की

"विरूथिनी" एकादशी।

इसका नाम "विरूथिनी" एकादशी है। इस एकादशीके रखने के बड़े फल बताये गये हैं।

वैसाख शुक्ल पक्ष की

"मोहिनी" एकादशी।

इसका नाम मोहिनी है। इसके सम्बन्ध में कूर्म पुराण में यह कथा कही गई है कि सरस्वती के तट पर भद्रावती नाम की नगरी में द्युतिमान राजा राज्य करता था। इसके कई पुत्र थे।

पुत्र का नाम धृष्टबुद्धि था जो बहुत पापाचारी था। जुआ खेलना, व्यभिचार करना, दुर्जनों का संग, वृद्धों का अपमान करना इत्यादि दुर्गुण इसमें पाये जाते थे। इसकी बुराइयों को देख कर इसके पिता ने इसे निकाल दिया। और वह बन में रहने लगा। कभी चोरी करता और कभी जानवरों को मार कर खाता। एक दिन वह अपने पूर्वजन्म के पुण्य प्रताप से कौण्डिल्य मुनि के आश्रम में जा पहुंचा। उस महामुनि के कपड़े के स्पर्श से उसका पाप जाता रहा। ऋषि ने कहा कि वैशाख शुक्ल एकादशी का व्रत करो इसके प्रभाव से बड़े से बड़े पाप नष्ट हो जाते हैं।

ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष की

"अपरा" एकादशी।

इसका नाम "अपरा" है। इसके प्रभाव से ब्रह्महत्या, ऐसे बड़े २ पाप दूर हो जाते हैं।

ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष की

"निर्जला" एकादशी।

इसका नाम "निर्जला" एकादशी है। इस एकादशी के संबन्ध में यह कहा जाता है कि भीमसेन ने व्यास जी से

कहा कि प्रति एक एकादशी के दिन अर्जुन नकुल आदि भाई मुझ से कहते हैं कि आप आज उपवास करो किन्तु मुझसे भूखा नहीं रहा जाता। इसलिये कोई ऐसा उपाय बताइये कि उपवास न करते हुये मैं पाप का भागी न बनूं। इसपर व्यास जी ने कहा कि जो लोग एकादशी को अन्न खाते हैं वे अवश्य नरक जाते हैं यह सुन कर भीमसेन कांपने लगा और कहने लगा कि हे पितामह मुझ से तो भूखा नहीं रहा जायगा। त व्यास जी ने बताया कि अगर ज्येष्ठ मास शुक्ल पक्ष में व्रत रखो तो तुम्हारे भात एकादशी व्रत न करने का जो पाप है वह अवश्यमेव मिट सकता है। इस में एकादशी के सूर्योदय से द्वादशी तक जल की मनाही रहती है इस एकादशी के दिन जल घड़ा भर के दान देने से सब पाप छुट जाता है। इसको "पाण्डव" एकादशी भी कहते हैं।

—*—

आषाढ़ कृष्ण पक्ष की

"योगिनी एकादशी"

इसका नाम "योगिनी" एकादशी है। इसके बारेमें यह कथा कही जाती है कि कुबेर के यहां हेममाली नाम का फूल लाने वाला था। उसकी स्त्री का नाम विशालाक्षी था। प्रति दिन वह समय पर कुबेर के यहां शिव पूजन के लिये पुष्प दे आया करता था! एक दिन अपनी स्त्रीके वश

हो घर पर ही रह गया और कुबेर के यहां उसने फूल नहीं पहुंचाये। कुबेर को शिव पूजा करते २ दोपहर हो गया किन्तु फूल लेकर वह नहीं गया कुबेर को बड़ा क्रोध आया और उस को बुला कर उसका पूरा हाल जाना, और उसे श्राप दिया कि तू ने देव की अवहेलना की है इसलिये कोढ़ी होकर पतित हो जा और सदा के लिये अपनी स्त्री से वियुक्त हो। यह वचन सुनते ही हेममाली वहाँ से नीचे गिर गया और उसका शरीर कुष्ट से भर गया। कुछ दिन असह्य दुःखों को सहता हुआ वह, फिरने लगा। अन्तमें वह मार्कण्डेय मुनि के आश्रम में जा पहुंचा मार्कण्डेय से उसने अपना पूरा हाल सच सच कह दिया इससे प्रसन्न होकर मार्कण्डेय ने उसे बताया कि अषाढ़ कृष्ण की एकादशी के व्रत करने से कुष्ठ रोग नष्ट हो जाता है।

हेममाली ने मुनि की आज्ञानुसार इस व्रत को किया और कुष्टसे छुटकारा पाकर फिर अपने पूर्व प्राप्त को यास हो गया।

अषाढ शुक्ल पक्ष की

"पद्मनाभा" एकादशी।

इसका नाम "पद्मनाभा" एकादशी है इस दिन व्रत करने से, यदि वर्षा न होती हो तो हो सकती है।

कथा—एक राजा के यहां एक बार तीन वर्ष पानी नहीं बरसा जिस से उसकी प्रजा मरने लगी। राजा को प्रजा की दशा

देखकर बड़ा दुःख हुआ और वह गहन बन में प्रवेश करके मुनियों से इस के उपाय पूछने का प्रयत्न करने लगा। बन में घूमते घूमते वह अंगिरस ऋषि के पास आया। उन्हों ने राजा को "पद्मनाभा" एकादशी पर उपवास करने की सलाह दी जिस के पालन से राजा के राज्य में बहुत काफी वर्षा हुई और प्रजा का दुःख जाता रहा।

(ब्रह्माण्ड पुराणसे)

श्रावण कृष्ण तथा शुक्ल पक्ष की

"कामिका" और "पुत्रदा" एकादशी

इस का नाम "कामिका" एकादशी है, श्रावण शुक्लपक्ष की एकादशी का नाम "पुत्रदा" है इसके सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि द्वापर युग के आदि में महिष्मती नगरी में महीजित नाम का राजा था। वह अपनी प्रजा को पुत्र के समान पालता था और देश पर न्याय और धर्म के अनुसार राज करता था। किन्तु उसके कोई पुत्र नहीं था। कुछ दिन तक चुपचाप बैठे रहने के बाद पुत्र-प्राप्ति से निराश होकर वह अपने राज्य के पण्डितों के पास गया और उनसे कहने लगा कि मैंने कभी प्रजा पर कोई अत्याचार नहीं किया, अपने भाई बन्धुओंको भी अन्याय करने पर दण्ड दिया प्रजा को अपनी सन्तान के समान पाला फिर क्या कारण है कि मैं इस समय तक पुत्र-हीन हूं।

ब्राह्मण गण और प्रजा राजा की इस बात को सोचने लगे और दुःखी हो कर इस को मिटाने लिये वनमें चले गये। प्रजा और ब्राह्मण घूमते २ लोमश मुनि की कुटी पर पहुंचे। और मुनि से अपने आने का कारण बताया। मुनि थोड़ी देर तक ध्याना-वस्थित हुए और उस राजा का सब हाल जान कर कहने लगे कि पूर्व जन्म में यह राजा बड़ा धन-हीन वैश्य था। गांव गांव घूम कर वाणिज्य करता था। एक दफा ज्येष्ठमास के शुक्लपक्ष की द्वादशी के दिन दोपहर के समय गांव की सीमापर इसे प्यास लगी। पास ही एक निर्मल सरोवर देख कर वहां पानी पीने गया। वहां तुरन्त ही प्रसूता गाय भी प्यास से व्याकुल हो कर आई। इस ने उस गाय को हांक कर स्वयं पानी पहले पी लिया जिस पाप के कारण यह इस समय पुत्र-हीन होगया है। इसलिये अगर "पुत्रदा" नाम की एकादशी का व्रत करे तो उसे पुत्र हो। ब्राह्मण और प्रजागण लोमश ऋषि के वचन सुन कर अपने घर वापस आये और राजा से सब हाल कहा। राजा ने यथायोग्य व्रत का पालन किया और उसे पुत्र प्राप्त हुआ।

(भविष्य पुराण से)

भाद्रपद कृष्ण पक्ष की

"अजा" एकादशी।

इस का नाम "अजा" एकादशी है। ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा है कि राजा हरिश्चन्द्र बड़ा सत्य संध और दृढ़ व्रत था। अपनी सच्चाई के कारण उसे अनेक कष्ट उठाने पड़े। उसे अपनी स्त्री बालक और स्वयं अपने को अपने प्रण के कारण बेचना पड़ा। वह एक श्वपत्रके घर में बिका और वहीं रहने लगा। किन्तु हमेशा चिन्ता में निमग्न रहता था कि क्या कारण कि मैं ऐसे दुःख में पड़ा एक दिन उस को एक मुनि से भेंट हो गई। मुनि से हरिश्चन्द्र राजा ने अपना वृत्तान्त सुनाया इस पर मुनि ने भाद्र पक्ष के कृष्ण पक्ष की एकादशी का व्रत करने को कहा जिस से राजा के सब दुःख कट गये वह अपनी स्त्री और पुत्र से फिर मिला और उसका राज्य भी उसे फिर प्राप्त हो गया। और अन्त में स्वर्ग-लोक को प्राप्त हुआ।

भाद्रपद शुक्ल पक्ष की

"बामन" एकादशी।

इसका नाम "बामन" एकादशी है, इसका नाम जयंती भी कहा है। कहते हैं कि इस दिन क्षीर सागर में शय्या पर सोये हुए भगवान करवट लेते हैं। इस दिन बामन भगवान

की पूजा की जाती है। दही चावल और रुपयों का दान किया जाता है।

—————※—————

आश्विन कृष्ण पक्ष की

"इन्दिरा" एकादशी।

इसका नाम "इंदिरा" एकादशी है। अधोगति को प्राप्त पित्रों को गति देने वाली है। इसके सम्बन्ध में ब्रह्म वैवर्त पुराण में यह कथा कही जाती है कि माहिष्मती पुरी में सत युग में इन्द्र सेन नाम का एक राजा था। उसके सामने नारद ने एक दिन आकर कहा कि मैं स्वर्ग-लोक से अभी यम-लोक गया हुआ था वहां तुम्हारे पिता को दुखी पाया उन्हों ने मेरे जरिये तुम्हारे पास यह संदेसा भिजवाया है कि "इन्दिरा" व्रत करके मुझे स्वर्ग लोक पहुंचाओ। नारद ने "इन्दिरा" व्रत की रीति आदि भी इन्द्रसेन से कही पितृ-भक्त इन्द्रसेन ने उस व्रतको किया और उसका पिता गरुड़ पर बैठ कर उसी समय स्वर्ग को चला गया।

—————※—————

आश्विन शुक्ल पक्ष की

"पाशांकुशा" एकादशी।

इसका नाम "पाशांकुशा" एकादशी है। पद्म नाम भगवा-

न की उस दिन पूजा की जाती है। इसका भी ब्रह्माण्ड-पुराण में बड़ा माहात्म बताया गया है।

कार्तिक कृष्ण पक्ष की

"रमा" एकादशी।

इसका नाम "रमा" एकादशी है। इसके सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि मुचकंद राजा की कन्या चन्द्रभागा का विवाह शोभन नाम के राजकुमार से हुआ था शोभन एक दिन अपने श्वसुर के घर आया। तो उस दिन एकादशी थी। शोभन बहुत ही दुर्बल था किन्तु मुचकंद राजा इतने दृढ़-भक्त थे कि दुर्बलता का कुछ खयाल न करके उन्हों ने शोभन को एकादशी-व्रत करने पर मजबूर किया। परिणाम यह हुआ कि द्वादशी के प्रातः काल राजकुमार शोभन मर गया। राजा मुचकन्द ने उसका यथा बिधि दाह कर दिया और चन्द्रभागा को आज्ञा दी कि वह अपने पति के साथ सती न हो। चन्द्रभागा उस दिन से बिधवा हो कर किन्तु एकादशी को मानती हुई रहने लगी। शोभन ने मरने के बाद एकादशी के प्रभाव से मंद्राचल पर एक सुन्दर देव पुर पाया जहां इसको हर एक प्रकार का आनन्द प्राप्त था। मुचकन्द पुर का रहने वाला सोमशर्मा नाम का एक ब्राह्मण तीर्थ-यात्रा करता करता एक दफ़ा मंद्राचल पर गया तो शोभन को देख कर पहिचान गया कि

यह तो हमारे राजा के दामाद हैं। वह उनसे मिलने गया। शोभन ने अपने पिता श्वसुर और स्त्रीका हाल पूछा। सोमशर्माने सबका कुशल सम्वाद सुनाया। फिर सोमशर्मा ने शोभन से पूछा कि वह वहां कैसे पहुचे। शोभन ने सब हाल कह सुनाया और बताया कि रमा नामकी एकादशीके प्रभाव से वह मरते ही मन्दराचल में देव पुर का स्वामी हो गया था। सोमशर्मा इसके बाद मुचकन्द पुर वापस आया और राजकुमारी चन्द्रभागा से सब हाल कह सुनाया। चन्द्रभागा ने जब यह वृतान्त सुना तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ और अन्त में उसने सोमशर्मा से कहा कि मुझे मन्दराचल ले चलो। सोमशर्मा उसे लेकर चला और ऋषि के मन्त्र के प्रभाव से चन्द्रभागा को दिव्य रूप धारण कराके उसे मदराचल शोभन के पास ले गया। वहां शोभन और चन्द्रभागा आनंद पूर्वक रहने लगे। चंद्रभागा ने अपने पति के मरने के बाद बराबर एकादशी का व्रत किया था और इसका प्रभाव था कि अन्तमें उसकी अपने पति से भेट हो गई।

तुलसी विवाह [कार्तिक कृष्ण एकादशी]

कार्तिक कृष्ण एकादशी और अमावस्या में किसी शुभ दिन तुलसी और कृष्ण का प्रति वर्ष विवाह किया जाता है। इस त्योहार के सम्बन्ध मे पुराण ग्रन्थों मे दो मुख्य कथायें बयान की गई हैं।

कालनेमि नाम दैत्य की कन्या बृन्दा का विवाह जलंधर नाम दैत्य के साथ हुआ था। जलंधर की उत्पति महादेवजी के पसीने से हुई थी। जिस समय देव और दैत्य दोनो मिल कर सागर का मथन कर रहे थे उस समय इन्द्र ने महादेव जी का किसी बात पर अपमान कर दिया था, इस अपमान से महा-देव जी के शरीर से जो पसीना निकला और समुद्र में गिरा उस से जलंधर नाम का दैत्य पैदा हुआ था। इसी दैत्य का विवाह कालनेमि की कन्या बृन्दा के साथ हुआ था। जब जलंधर बड़ा हुआ तो उसने सागर से पैदा होनेके कारण जलाशयों का अधिपति घोषित किया और महासागर से उत्पन्न * १४ रत्नों को इन्द्र से मांगा इन्द्र ने इन रत्नों को देने से इन्कार किया इस पर जलंधर ने इन्द्र लोक पर आक्रमण करने का बिचार किया और इसके निमित्त एक कठिन तप करना शुरू कर दिया। ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर उसे यह बर दिया कि जब तक तुम्हारी स्त्री तुमको छोड़ कर किसी अन्य पुरुष से सम्बन्ध न करेगी उस समय तक तुम्हारी मृत्यु असम्भव है। इस पर जलंधर को अपनी सफलता का पूरा विश्वास हो गया और उसने

* निम्न लिखित १४ रत्न सागर से पैदा हुए थे:—
(१) लक्ष्मी (२) कौस्तुभ (३) पारिजातक (४) सुरा (५) धनवन्तरि (६) चन्द्रमा (७) अमृत (८) कामधेनु (९) ऐरावत (१०) रम्भा (११) काल कूट (१२) उच्चैश्रवार (१३) सुदर्शन चक्र (१४) शंख।

इन्द्र के ऊपर चढ़ाई कर दी। अमरावती को लूट लिया। देवों को हरा दिया। विष्णु भगवान लड़ाई से भाग निकले और देवताओं में परेशानी फैल गई। विष्णु भाग कर बैकुण्ठ मे छिपे और लक्ष्मी से सब हाल कह सुनाया। उनसे पूछा कि इस दैत्य के मारने का क्या उपाय है। लक्ष्मी ने ब्रह्मा के वरदान का पूरा किस्सा कह सुनाया और कहा कि वृन्दा जब तक पवित्र सती है उस समय तक दैत्य जलंधर की मृत्यु असम्भव है। इस पर देवता लोग वृन्दा के सतीत्व भ्रष्ट करने का उपाय सोचने लगे। विष्णु ने शिव को भेजा को जाओ वृन्दा का सतीत्व किसी प्रकार से भ्रष्ट कर आओ, किन्तु महादेव जी सफल नहीं हुए। फिर विष्णु स्वयं वृन्दा के पास जलंधर का रूप धारण कर के गये। वृन्दा ने समझा कि यह मेरा पति है इस पर वह उनको अपने पति के समान समझने लगी। ज्योंही विष्णु वृन्दा के सतीत्व नष्ट करने में सफल हुए कि जलंधर का शिर इन्द्र ने काट दिया और वह शिर वृन्दा के आंगन में आ गिरा। वृन्दा को जब सब हाल मालूम हुआ तो उसे बड़ा क्रोध आया और उसने विष्णु को शाप दिया कि जाओ तुम काले पत्थर की बटिया शालिग्राम हो जाओ। विष्णु ने इसके उत्तर में उसे यह शाप दिया कि तुम तुलसी वृक्ष हो। उसी समय से विष्णु शालिग्राम हुए और वृन्दा तुलसी वृक्ष हो गई और विष्णु भगवान के मानने वाले प्रति वर्ष तुलसी रूपी वृन्दा का विवाह शालिग्राम से करते हैं।

दूसरी कथा इस त्योहार के सम्बन्ध में यह कही जाती है कि सत्यभामा को अपने सौन्दर्य पर बड़ा अभिमान था। सत्यभामा समझती थी कि कृष्ण को मैं सबसे ज्यादा प्यारी हूँ। इस लिये एक दिन जब नारद जी द्वारिका पुरी पहुंचे और सत्यभामा के महल में पहुचे तो सत्यभामा ने कहा कि, हे मुनि! मै चाहती हू कि कृष्ण मेरे जन्म जन्मान्तर मेरे पति हों। इसका क्या उपाय है। नारद मुनि ने सत्यभामा के स्वार्थ और अभिमान को देख कर उसे सबक सिखाना चाहा। कहा कि यह सिद्धान्त तो तुम्हें मालूम है कि जिस बस्तु की तुम जन्मान्तर में इच्छा रखती हो उसे इस जन्म में तुम्हे किसी सुपात्र ब्राह्मण को दान करना चाहिये। यदि तुम चाहती हो कि तुम्हे इस जन्म के बाद कृष्ण मिले तो तुम्हे कृष्ण को दान कर देना चाहिये। इस पर सत्यभामा ने कृष्ण को नारद जी को दान कर दिया। नारद ने कृष्ण को अपना शिष्य बना लिया और उन्हे अपने साथ वीणा लिये रहने पर नियत किया और अपने साथ लेकर स्वर्ग लोक को चल दिये। जब यह समाचार कृष्ण के और रानियों और महारानियों को पहुंचा (रूकुमणि के अलावा) तो सब वहां आकर नारद के पैरों पर पड़ीं और प्रार्थना करने लगी कि कृष्ण को स्वर्ग न ले जाओ। किन्तु नारद ने कहा कि सत्यभामा ने कृष्ण को हमे दान कर दिया है। इसपर और सब रानियां सत्यभामा के पास पहुंचीं और उससे पूछने लगी कि १६ सहस्र एक सौ आठ स्त्रियों के हृदयेश्वर श्रीकृष्ण को दान कर देने का

अधिकार केवल एक सत्यभामा को कैसे था। सत्यभामा इसका ठीक उत्तर न दे सकी और नारद से पूंछने लगी कि आपही कोई उपाय बतावें। इस पर नारद ने कहा कि कृष्ण के ही वज़न के बराबर हमें सोना और मोती दो तो हम कृष्ण को न ले जायें। सत्यभामा बड़ी प्रसन्न हुई। तराज़ू लटकाया गया और सत्य-भामा ने अपना सुवर्ण और मणि तराज़ू पर रखना शुरू किया किन्तु जिस ओर कृष्ण बैठे हुए थे उस ओर का पलड़ा ज़रा भी नहीं उठा। तब और सब रानियां एक एक करके अपना अपना गहना पलड़े में रखा किन्तु तराज़ू का पलड़ा ज़रा भो नहीं उठा। नारद ने कहा कि रुकुमणि कृष्ण की प्रियतमा है। उसके पास गहने ज्यादा होंगे उन्हीं को बुलाव उन्हीं के गहनों के रखने से शायद कृष्ण के बराबर सोना पूरा हो जाय। सत्यभामा को यह बात अच्छी न लगी लेकिन मजबूरी थी। रुकुमणि के पास गई। रुकुमणि उस समय स्वच्छ वस्त्र पहने तुलसी की पूजा कर रही थी। सत्यभामा को देखकर उठ कर खड़ी हो गई और आदर सत्कार के बाद उनसे पूछा कि आप ने किस लिये कष्ट किया सत्यभामा ने सब हाल कह सुनाया। रुकुमणि ने उत्तर दिया कि मैं तो आभूषण पहनती ही नहीं और न मेरे पास इतने आभूषण हैं कि मैं उनसे जगत्पति की बराबरी करा सकूं। किन्तु मैं कृष्णचन्द्र की प्रियतमा तुलसी से प्रार्थना करूंगी कि वह कोई ऐसी चीज़ दे जो उनके पति श्रीकृष्ण को वज़न में बराबरी कर सकें।

हाथ जोड़कर प्रार्थना करने पर तुलसो के वृक्ष से एक पत्तो गिर पड़ी। रुकुमणि:उसे लेकर सत्यभामा के साथ वहां आई जहां नारदजी थे। पहले तो नारद को प्रणाम किया उसके बाद कृष्ण को और तत्पश्चात् तुलसीदल तराजू के पलड़े में रखा। रखतेही श्रीकृष्ण का पलड़ा एक दम से उठ गया। नारदजी उस पत्ती को लेकर चले गये उसी समय से रुकुमणि कृष्णकी पटरानी कहलाई। किन्तु उन्होंने इस सौभाग्य को तुलसी को दे दिया जोकि जलंधर की विधवा स्त्री थी और उसी के साथ उसी समय से प्रति वर्ष विवाह होने की प्रथा चल पड़ी है। (पद्म पुराण)

भीष्म एकादशी।

कार्तिक एकादशी को भीष्म पञ्चक व्रत मनाया जाता है। इसी दिन भीष्मपितामह पांडवो के वाण से जख़मी होकर शरशैया पर लेटे हैं। और लेटे २ ही पाडवो को उपदेश किया है जो शान्तिपर्व महाभारत में वर्णित है। इस दिन लोग व्रत रहते हैं और भीष्म ने जो उपदेश दिया हैं उसे पढ़ते हैं।

दत्तात्रय जन्म।

(मार्गशीर्ष कृष्ण दशमी को होता है)

दत्तात्रय के तोन सर और ६ हाथ हैं। ब्रह्मा विष्णु

और, महेश तीनों देवताओं की यह संयुक्त मूर्ति मानी जाती है। इसके सम्बन्ध में यह कथा बयान की जाती है कि एक समय ब्रह्मा की स्त्री सावित्री विष्णु की स्त्री लक्ष्मी और शिव की स्त्री पार्वती को अपने अपने पति-व्रत और सुशीलता पर बड़ा अभिमान हो गया। यह लोग समझने लगीं कि सारे विश्व में हम लोगों के समान पतिव्रता और सुशीला कोई और स्त्री है ही नहीं। नारद मुनि से यह अभिमान नही देखा गया और उन्होंने इस लिये इस अभिमान को तोड़ना चाहा। उन्होंने पहले पहल पार्वती जी के पास जाकर कहा कि मैं सारे विश्व में भ्रमण करता फिरता है कि अत्रि मुनि की स्त्री अनुसूया के समान पतिव्रता शुद्ध चरित्रा और सुशीला मैंने किसी भी लोक में नहीं देखा। पार्वती जी को अनुसूया की यह प्रशंसा अच्छी नहीं लगी। नारद जी के चले जाने के बाद इन्होंने शिव जी से कहा तो तुम अनु-सूया पर इस प्रकार से कोप करो कि उसका पतिव्रत भ्रष्ट हो जाय। नारद ऋषि पार्वती जी से यह बात कह कर अपनी माता सावित्री और अपने पिता ब्रह्मा जी के पास गये और वहां भी अपने माता के सामने अनुसूया की प्रशंसा करने लगे। सावित्री को भी अनुसूया की प्रशंसा अच्छी नहीं मालूम हुई। सावित्री ने भी ब्रह्मा से यह आग्रह किया कि किसी प्रकार से अनुसूया का पतिव्रत और सच्चरित्रता भ्रष्ट करो। नारद जी ने इसके बाद लक्ष्मी के सामने जाकर यही बात कही और लक्ष्मी जी

भी अनुसूया की प्रशंसा न सुन सकी और उन्होंने भी विष्णु भगवान से कहा कि तुम सावित्री को उन की इस जगत विख्यात सच्चरित्रता से भ्रष्ट कर दो।

तीनो देवता अपनी अपनी स्त्रियों से प्रेरित हो कर अत्रेय मुनि की कुटी की ओर अनुसूया को उनके धर्म और कीर्ति से भृष्ट करने के लिये चले। कुटि के द्वार पर आकर उन्होंने भिक्षा मांगी अनुसूया भिक्षा लेकर आगई। किन्तु उन्होंने इसे स्वीकार नहीं किया और कहा कि हम लोग इच्छा भोजन करेगें। अनुसूया इसपर भी राजी हो गई। उनसे कहा कि आप लोग जाकर नदी में स्नान कीजिये और फिर आईये इतने में मै भोजन तैय्यार करती हूं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश जो सन्यासी का रूप धर के आये थे स्नान करने गये और जब लौटे तो उनके लिये भोजन तैय्यार मिला। जब अनुसूया उनके सामने भोजन का थार लाई तो उन्होंने इसे खाने से इन्कार किया और कहा कि जब तक तुम नग्न होकर हमारे लिये भोजन न परोसोगी उस समय तक हम लोग भोजन न करेंगें। अनुसूया को यह बात सुन कर बहुत घृणा और क्रोध उत्पन्न हुआ किन्तु जब उसने जरा बिचार किया तो उसे देवों के इस छल कपट का पता चल गया। वह अपने पति के पास गई उनका पैर धोया और उसी जल को लाकर इन देवताओं के ऊपर डाल दिया। इस जल के प्रभाव से ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनो दूध मुहे बच्चे हो गये। तब अनुसूया नग्न हो गई और हर एक को उठाकर उनकी इच्छाभर

उन्हें अपना दूध पिलाया और फिर तीनों को पालने में डालकर डोलाने लगी। जब कई दिन होगये और ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों में से कोई भी न लौटा तो इनकी स्त्रियां बड़ी चिन्तित हुईं और रो रो कर इधर उधर अपने अपने पति को तलाश करने लगीं। स्वर्ग-लोक के चौराहे पर इनसे और नारद से भेंट हो गई। इन्होंने नारद से पूछा, "कि तुम ने कहीं हमारे पतियों को देखा है।" नारद को यद्यपि सब हाल मालूम था किन्तु उन्होंने केवल इतना कह कर टाल दिया कि उस रोज मैंने उन सबों को अत्रयमुनि के आश्रम की ओर जाते देखा था। सावित्री, लक्ष्मी और पार्वती तीनों अत्रयमुनि के आश्रम पर पहुंचीं और वहां आकर अनुसूया से पूछा कि, "क्या यहां हमारे पति लोग आये थे" ? अनुसूया ने उन्हें उस पलने को दिखाया जहां यह तीनों देवता शिशु अवस्थामें पड़े थे और कहा यही तुम्हारे पति हैं। अपने अपने पति को तुम लोग पहचान लो। तीनों बच्चे एक ही समान थे इस-लिये पहचानना मुशकिल था किन्तु लक्ष्मीजी ने बहुत ज्यादा गौर करने के बाद उनमें से जिस एकको विष्णु समझ कर उठाया वह महादेवजी निकले इस पर लक्ष्मी का बड़ा उपहास हुआ।

यह अवस्था देख कर लक्ष्मी, पार्वती आदि अनुसूया से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने लगीं कि हमें अपने २ पति प्रदान करो। अनुसूया ने इस पर कहा कि चूंकि इन्होंने हमारा दूध पिया है इस लिये हमारे बच्चे हो चुके और इन्हें किसी न किसी रूप में

हमारे बालक हो कर रहना पड़ेगा इस पर यह निश्चित हुआ कि तीनो देवता ही एक संयुक्तस्वरूप धारण करें। और यही दत्तात्रय का जन्म था। इसके बाद अनुसूया ने अपने पति के पैर धोये और वही जल फिर उनके ऊपर डाल दिया और इन देवताओं ने फिर अपना पुराना रूप धारण कर लिया।

वामन-द्वादशी

दैत्यराज विरोचना का पुत्र बलि बड़ा प्रतापी था। वह जैसा ही बलवान, वैसा ही युद्ध-विद्या-विशारद था, उससे बड़े बड़े राजा-महाराजा यहां तक कि देवतागण भी थरथर काँपते थे। एक वार रावण उसके बलकी परीक्षा करने उसके पास गया था। वलि ने अपना कबच उठाने के लिये उससे कहा। रावण उठा न सका और लज्जित होकर वहां से चला गया। धीरे धीरे बलि का प्रताप इतना बढ़ा, कि देवताओंको शंका होने लगी। उसने अपने बाहु-बल से कितने ही देवताओं को जीतकर अपने यहां कैद कर रक्खा। यह देख बहुत से देवता एकत्र होकर विष्णु भगवान के पास अपना कष्ट निवेदन करने के लिये गये।

इस समय विष्णु-भगवान क्षीर सागर में शेषनाग पर सोये हुए थे। देवताओं की स्तुति सुन कर भगवान बोले--"आप लोग चिन्ता न करें। शीघ्र ही बलि का प्रताप नष्ट होगा. उसका गर्व खर्व हो जायगा।"

विष्णु भगवान की बातोंसे सन्तुष्ट होकर देवता अपने अपने स्थान पर लौट आये और भगवान विष्णु की कृपा से बलि के मान मर्दन की राह देखने लगे।

यद्यपि बलि ने देवताओं से कितनी ही बार युद्ध किया था, पर वह वास्तव में बड़ा दानी था। वह जिस समय पूजन करने बैठता, उस समय जो कोई उससे जो कुछ आकर मांगता था, वही पाता था। उस के दान की वह कीर्त्ति देश देशान्तर में फैली हुई थी। उस का दान-प्रताप इतना बढ़ा हुआ था, कि इन्द्र को भी शंका हो गई थी कि कहीं अपने दान बल से वह मेरे सिंहासन पर अपना अधिकार न जमा ले और देवताओं का भी राजा न बन बैठे। इस भय से इन्द्र भी थरथर कांपा करते थे।

इसी तरह बहुत दिन हो गये, पर राजा बलि का कुछ न हुआ। न तो देवता ही उस के बन्धन से मुक्त हुए, न देवराज की शंका ही किसी तरह मिटी। यह देख देवताओं ने सोचा, कि शायद विष्णु भगवान भूल गये। अतः इस बार बहुत से देवता एकदम एकत्र हो, विष्णु भगवान के पास जाकर उन की नाना प्रकार से स्तुति करने लगे। देवराज इन्द्र ने भी अपनी दुःख कथा कह सुनायी।

सुन कर विष्णु भगवान हंस पड़े। बोले,—'देवराज ? शंकित न हों। आपका इन्द्रासन कोई न ले सकेगा। पर समय आये बिना कोई काम नहीं होता। दैत्यराज बलि कोई साधारण जीव नहीं है। उस को नीचा देखना कोई साधारण काम नहीं है। वह अपूर्व दानी है, तपस्वी है। उस की तपस्या का फल जबतक नष्ट नहीं होता, तबतक कोई भी उस का कुछ बिगाड़ नहीं सकता। अतः आप लोग शान्त हों। शीघ्र ही वह समय आयेगा,

जब आप लोगों की शंका दूर हो जायगी। देवी अदिति ने अत्यन्त कठोर तपस्या कर मुझ से वरदान प्राप्त कर लिया है, कि मैं पुत्र रूपमें उनके गर्भमे जन्म धारण करूं। अतः वह समय शीघ्र ही आनेवाला है, जब पुण्यात्माओं का दुःख दूर करने के लिये मुझे भारत में जन्म ग्रहण करना पड़ेगा। अब आप लोग अपने अपने स्थान पर जायें और निःशंक भाव से, सुख से अपने दिन बितायें।"

देवतागण फिर भी सन्तोष कर अपने अपने स्थान पर चले गये। इधर यथा समय देवी अदिति गर्भवती हुईं और नवें मास में उन के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ। यह पुत्र पूरा बौना था। उस के हाथ पैर छोटे छोटे पर सर बहुत बड़ा था। इस बामन को देख कर अदिति मन में बड़ी प्रसन्न हुईं। उन्हों ने समझ लिया, कि किसी उद्देश्य से इसी रूप में भगवान ने मेरे घर में जन्म ग्रहण किया है। इधर उसी दिवस दैत्यों में हाहाकार मच गया। इस बामन के जन्म का समाचार सुनकर वे अत्यन्त शङ्कित हुए।

पुत्र-जन्म का समाचार सुन कर जैसी अदिति प्रसन्न हुई, वैसी ही प्रसन्नता महर्षि कश्यप को भी हुई। भगवान विष्णु को पुत्र-रूप में अपने घर में आया देख उनकी प्रसन्नता का वारापार न रहा। उन्हों ने उसी समय अन्यान्य ऋषिगण को निमन्त्रण दे कर बुला भेजा। जातकर्म तथा नामकरण आदि संस्कार किये। इस के बाद यथा समय उन का यज्ञोपवीत संस्कार भी हुआ। उस काल में ब्राह्मण वेश में यज्ञोपवीत कुशाचर्म, जिन पहने हुए बामन बड़े ही शोभायमान दिखाई देने लगे।

इन दिनों राजा बलि एक यज्ञ कर रहा था। इस यज्ञ काल में भी उसका यही नियम था, कि जो कोई उससे जो कुछ मांगता था, बलि निःसंकोच भाव से उसे वह देता था। वामन ने यही अवसर उपयुक्त जाना और उसके द्वार पर जा पहुंचे।

राजा बलि यज्ञमण्डप में बैठा हुआ था। अनेक ऋषि मुनि तथा ब्राह्मण वहां विराज रहे थे। दैत्यों के कुल गुरु शुक्राचार्य भी उपस्थित थे। इसी समय द्वारपाल ने वामन वेषधारी एक ब्राह्मण के आगमन को सूचना दी। सुनते ही राजा बलि ने उसे भीतर बुला भेजा। उसका वह विचित्र वेश देख कर सारी सभा आश्चर्य चकित हो गयी। यद्यपि वामन का वेश विचित्र था, तथापि उसके चेहरे पर एक अलौकिक तेज झलक रहा था।

वामन का यह वेश देख कर शुक्राचार्य के मन में सन्देह हुआ। उन्हों ने अपनी दिव्य दृष्टि से विचार लिया, कि वामन कोई साधारण पुरुष नहीं है। यह अवश्य ही कोई अवतार है। अतः सम्भव है, कि राजा बलि पर कोई आपत्ति आ जाये। इस लिये राजा बलि को विशेष रूप से उन्हों ने सावधान कर दिया।

पर राजा बलि को उनकी बात पर विश्वास न हुआ। बलि ने कहा,—"क्या चिन्ता है? यह सब धन वैभव कोई अपने साथ लेकर नहीं जाता। यदि यह चला ही जायगा ता मेरा क्या बिगड़ जायगा?"

शुक्राचार्य ने बहुत कुछ समझाया पर बलि ने एक न मानी। उसने तुरन्त ही वामन को अपने पास बुला कर कहा,—"क्या मांगते हो, मांगो।"

बामन ने कहा,—"अधिक कुछ नहीं। तीन पग पृथ्वी। यदि इतनी कृपा आप करें तो मैं अपने पढ़ने के लिये एक कुटी बनवा लूं और उसी में बैठ कर विद्याध्ययन किया करूं।"

बलि ने हाथ में कुश और जल उठा लिया, पर शुक्राचार्य्य दान मंत्र कहने के लिये किसी तरह तय्यार न हुए। वे बारम्बार राजा बलि को इस तरह पृथ्वी दान करने के लिये निषेध करने लगे।

पर विनाशकाल में बुद्धि भी विपरीत हो जाती है। शुक्राचार्य के लाख मना करने पर भी बलि ने न माना। लाचार शुक्राचार्य को दान-मन्त्र कहना ही पड़ा। बलि ने बामन के इच्छानुसार तीन पग पृथ्वी दान कर दी।

यह कार्य समाप्त होते ही, बामन ने एक पैर से भूमि, दूसरे से आकाश में अधिकार जमा लिया और बोले,—"अब तीसरा पैर-का स्थान बताओ।"

बलि ने अपनी पीठ दिखा दी। इस अद्भुत और आश्चर्यमय कार्य को देख कर सभी विस्मित हो पड़े। चारों ओर दुन्दुभी बजने लगी। सभी साधु साधु कहने लगे।

इसके बाद बामन ने सब दैत्यों को विजय किया और तीनों-लोकों पर अधिकार जमा कर बलि से बोले,—"अब तुम अपने दल-बल सहित पातालपुरी में जा कर स्वच्छन्दता पूर्वक राज्य करो

इस इन्द्र का समय बीतने पर तुम्हीं इन्द्रत्व का पद प्राप्त करोगे।' बलि ने भगवान वामन से, इतना सुनते ही प्रणाम कर कहाः-- "आप की आज्ञा शिरोधार्य्य है।"

इतना कह, बलि पातालपुरी को चला गया।

श्रीकृष्ण बोले—"महाराज युधिष्ठर! जिस दिवस वामन ने बली को छला था; उस दिवस द्वादशी तिथि थी इसी लिये, इस का नाम वामन द्वादशी पड़ा है। भाद्र मास की शुक्ल द्वादशी को जो नियम पूर्वक नदी में स्नान कर यह व्रत करता है, और वामन का पूजन करता है, उस के सब पाप तो छूट ही जाते हैं, साथ ही उस के सब मनोरथ भी उसी तरह पूरे हो जाते हैं जिस तरह अदिति-कश्यप के हुए अथवा देवताओं के मनोरथ परिपूर्ण हुए। इस लिये, इस व्रत को अत्यन्त श्रद्धा पूर्वक सब किसी को करना चाहिये।

धन त्रयोदशी ।

चैत्र त्रयोदशी को बंगाल में लक्ष्मी पूजा होती है । इसके सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि एक समय विष्णु भगवान मृत्यु-लोक को आ रहे थे लक्ष्मी ने कहा मुझे भी ले चलो । विष्णु ने संकोच किया और कहा कि अगर तुम मेरी आज्ञा को अक्षरशः मानने की प्रतिज्ञा करो तो मैं तुम्हे अपने साथ ले चलूं । लक्ष्मी जी राजी हो गईं । मृत्यु लोक में एक स्थान पर पहुंच कर विष्णु ने लक्ष्मी से कहा कि तुम यहीं ठहर जाओ मैं अभी आता हूँ किन्तु तुम दक्षिण की ओर न देखना । यह कह कर विष्णु जी चल दिये । जब वह नज़र से गायब हो गये तब लक्ष्मी के दिल में कौतूहल पैदा हुआ कि आखिर इन्हों ने मुझे दक्षिण की ओर देखने से क्यों रोका । लक्ष्मी जी ने विष्णु की आज्ञा का कुछ ख़याल न कर के दक्षिण की ओर देखा तो वहां सरसों का खेत फूला हुआ दिखाई दिया । यह उस खेत में गई और उसके फूल तोड़ कर अपने सर के बालों को खूब अच्छी तरह संवारा । जब विष्णु जी लौटे तो उन्हों ने लक्ष्मी को इस प्रकार सुशोभित देखा ।

उन्हे जब यह मालूम हुआ कि लक्ष्मी ने खेत वाले की आज्ञा लिये बिना ही फूल तोड़ लिये हैं तो उन्हो ने बताया कि इस देश में तो यह कायदा है कि जो इस प्रकार से किसी के धन को ले ले उसे मालिक के यहां बारह वर्ष तक सेवा करनी पड़ती है। नियम के पालन के लिये मजबूर होकर विष्णु जी ने ब्राह्मण का रूप धारण कर के और लक्ष्मी जी को ब्राह्मणी का रूप धारण करा के खेत के मालिक से सब हाल कह सुनाया और लक्ष्मी जी को सेवा करने के लिये छोड़ आये, और कह आये कि बारह वर्ष के बाद आ कर ले जाऊंगा। लक्ष्मी जी ने ब्राह्मण के यहां रहना शुरू किया तो इन्हे मालूम हुआ कि ब्राह्मण के यहां खाने तक का नहीं है। लक्ष्मी ने इस पर उस ब्राह्मणी की एक बहू से कहा कि तुम स्नान कर के देवी की पूजा करो और रसोई में जाओ वहां तुम्हे सब कुछ खाने को मिलेगा। ब्राम्हणी की बहू ने ऐसा ही किया और रसोई में जाकर जब देखा तो हर प्रकार का खाना मौजूद पाया। इसी प्रकार लक्ष्मी की सलाह के अनुसार चलने पर इस ब्राम्हण का घर धन धान्य से परिपूर्ण हो गया। ऐसी प्रभाव वाली स्त्री से सेवा लेना ब्राम्हणी ने उचित नहीं समझा किन्तु लक्ष्मी ने कहा कि मैं बिना अपराध की सजा काटे हुए न जाऊंगी। चैत्र कृष्ण त्रियोदशी को लक्ष्मी के बारह वर्ष समाप्त हुए। लक्ष्मी को घर के और सब लोग मानते थे किन्तु एक मझली बहू लक्ष्मी को बहुत सताती थी. इस लिये लक्ष्मी उसके हाथ की कोई चीज नहीं खाती थी।

जो कुछ वह दे जाती थी उसे अनार के वृक्ष के नीचे गाड़ देती थीं। जब चैत्र कृष्ण त्रितीया को लक्ष्मी का बारह वर्ष समाप्त हुआ और उसी दिन वारुणी पर्व पड़ा तब ब्राम्हणी सकुटुम्ब गंगा स्नान के लिये जाने लगी। लक्ष्मी को भी साथ ले जाना चाहा किन्तु लक्ष्मी नहीं गईं उन्हों ने केवल ४ कौड़ी बड़ी बहू को दी कि गंगा में छोड़ देना। ब्राम्हणी की बहू ने जब उन कौड़ियों को गंगा में छोड़ा तो उसमें इन कौडियों को लेने के लिये चार हाथ निकले। इसको देख कर ब्राम्हणी और उसके कुटुम्ब को पूरा विश्वास हो गया कि हो न हो मेरे यहां की दासी जरूर कोई देवी है। घर पर आई तो विष्णु भगवान लक्ष्मी को वापस ले जाने को तैयार मिले। जब लक्ष्मी जी दासता से मुक्त हो गईं तो उन्हो ने अपना परिचय दिया और चलते समय कह गईं कि तुम अनार के नीचे खोदना तुम्हें बहुत धन और रत्न मिलगें और भाद्र पद, कार्तिक, पूस और चैत्र में लक्ष्मी की अवश्य पूजा करना इससे तुम्हारे यहां धन की कभी कमी भी न रहेगी। अनार के नीचे ब्राम्हणी और उसकी बहुओं ने जब खोदा तो सब को तो रुपये पैसे मिले किन्तु उस बहू को जो लक्ष्मी को सताती थी सांप मिला जिसने उसे काट खाया और वह मर गई।



हरतालिका व्रत। [तीज] ३

यह व्रत भादो शुक्लपक्ष में तृतीया को किया जाता है। स्त्रियों के लिये इसे सब से उत्तम व्रत बताया गया है। इसमें केले के खम्भे गाड़े जाते हैं। चित्र विचित्र वस्त्रों से मण्डप को आच्छादित किया जाता है और शिव पार्वती की बालू की मूर्ति स्थापित कर के इसकी पूजा की जाती है। इसका फल यह बताया जाता है कि इस को करने वाली स्त्री विधवा नहीं होती।

हरतालिका व्रत के अर्थ हैं "हरित, आलिभिः" अर्थात् जिसमें आलि सखियों के साथ पार्वती जी हरी गई हों। इसके सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि हिमवान नाम पर्वत पर पार्वती जी ने बाल्यावस्था में बहुत कठिन तप करना शुरू किया। १२ वर्ष तक केवल धुंवा पीकर रहीं और चौसठ वर्ष तक सूखे पत्ते खाये। पार्वती जी के इस तप को देख कर उनके पिता बड़े चिन्तित हुए और सोचने लगे कि क्या करना चाहिये। इतने में नारद जी आ गये और उन्होंने सलाह दी कि इस कन्या के लिये विष्णु भगवान से बढ़ कर और कोई बर नहीं हो सकता। पार्वती जी के पिता सहमत हो गये किन्तु जब यह समाचार पार्वती जी ने सुना उन्हें दुख हुआ वह बेहोश हो कर गिर पड़ीं उन्होंने अपनी सखी से कहा कि महादेवजी के अलावा मैं किसी और से कदापि

विवाह न करूंगी। सखियों ने तब उन्हें सलाह दी कि चलो ऐसी जगह भाग चलें जहां तुम्हारे पिता जी को पता तक न चले। पार्वती जी को सखियां इसके बाद एक ऐसी जगह लेगईं जहां उन्हें कोई ढूंढ न सका। हिमवान ने अपनी कन्या को जब ग़ायब पाया तो तलाश करना शुरू किया, समझा कि शेर या भालू खा गया होगा। इधर पार्वती जी भागती २ एक मनोहर नदी के किनारे पहुंची जहां एक गुफा थी अन्न जल न खाये हुए उसी नदी के किनारे बालू की मूर्ति बना कर पार्वती जी ने शिव जी का आह्वान शुरू किया। यह दिन भाद्रपद शुक्ल त्रितीया का था। महादेव जी की समाधि इस ध्यान से भंग हो गई और वह पार्वती जी के सामने पहुंचे और पूछने लगे कि क्या चाहती हो। पार्वती जी ने कहा कि अगर आप प्रसन्न हैं तो मेरे साथ विवाह कर लीजिये। शिवजी एवमस्तु कह कर कैलास चले गये। थोड़ी देर बाद हिमवान आये और उन्होंने अपनी कन्या को नदी के किनारे सोती हुई देखा। पार्वती को गोद में उठा लिया और पूछा तुम यहां कैसे चली आई। पार्वती ने कहा कि जब मैंने सुना कि आप मुझे विष्णु को देने वाले हैं तो मैं भाग आई क्योंकि मैं विष्णु के साथ विवाह करना नहीं चाहती। यदि आप मेरा विवाह महादेव जी के साथ करें तो मैं घर को वापस जा सकती हूं अन्यथा नहीं। हिमवान ने पार्वती की बातें स्वीकार की और पार्वती का महादेव जी के साथ विवाह कर दिया।

(भविष्योत्तर पुराणसे)

सिद्धि विनायक पूजा [गणेश चतुर्थी ।]

यह पूजा भादो कृष्ण की चतुर्थी को की जाती है। इस तिथि में गणेश जी की पूजा होती है। गणेश जी के जन्म के सम्बन्ध में यह कथा प्रसिद्ध है कि एक समय महादेव जी कहीं बाहर चले गये। घर पर केवल पार्वती जी ही अकेली रह गईं। पार्वती जी ने स्नान करना चाहा किन्तु किसी गण को उस स्थान पर मौजूद न देख कर उन्हें यह परेशानी हुई को दरवाजे पर किसे बिठाऊं। क्योंकि भय यह था कि कहीं उनके स्नान के करते समय ही कोई आदमी या शिव जी स्वयं मकान में न आ जायें। इस लिये उन्होंने अपने शरीर की मिट्टी से एक पुतला बना कर दरवाजे पर बिठा दिया और स्वयं नहाने चली गईं। थोड़ी देरमें शिव जी बाहर से वापस आये। जब मकान में घुसने लगे तो मिट्टी के इस पुतले ने उनको जाने से रोका। शिव जी को इस पर क्रोध आया उन्हों,ने इसका सर काट डाला और अन्दर चले गये। शिव जी को आते हुये देख पार्वती को विस्मय हुआ उहोंने पूछा कि तुम कैसे चले आये क्या चौकीदार ने तुम्हे दरवाजे पर रोका नहीं। शिव जी ने पूरा किस्सा कह

सुनाया। जब पार्वती जी ने सुना कि उनका चौकीदार मारडाला गया तो वह रोने लगीं और उन्होंने कहा कि जब तक मिट्टी का यह पुतला जो मेरे पुत्र के समान है फिर से जीवित नहीं होता मैं शान्त न हूंगी। शिव जी को मजबूर हो कर उसे जीवित करने का उद्योग करना पड़ा। किन्तु अभाग्यवश इतने देर में इसका असली सर कहीं गायब हो गया। बहुत तलाश करने के बाद जब सर न मिला तो मजबूरन शिव जी ने हाथी का सर उसमें जोड़ दिया। गणेश जी की उत्पत्ति इस प्रकार हुई। गणेश जी मंगल करने वाले और हर एक काम को सिद्ध करने वाले कहे जाते हैं। भाद्रपद के चतुर्थी को इनकी सुवर्ण की मूर्ति और दो चार और चीजें दान में दी जाती हैं। इस व्रत का उपदेश स्कन्धपुराण के अनुसार कृष्ण जी ने कुरुक्षेत्र में युधिष्ठिर को किया था और इसी व्रत के प्रभाव से कौरवों पर विजय पाने की आशा दिलाई थी। इस व्रत के करने से कृष्ण जी ने कहा था गणेश जी बहुत प्रसन्न होते हैं।

स्कन्धपुराण के अनुसार इस व्रत को पहले पहल कृष्ण जी ने स्वयं किया था उस समय जब तक इन पर स्यमन्तक मणि के चुराने का दोष लगा था। स्यमन्तक मणि चुराने का किस्सा यह है कि द्वारिकापुरी में अग्रसेन नाम का एक यादव रहता था इसके दो पुत्र थे सत्रजित और प्रसेन। सत्रजित ने सूर्य्य देवता की बड़ी स्तुति की और बहुत उग्र तपस्या की। सूर्य्य देवता ने प्रसन्न हो कर सत्रजित को स्यमन्तक नाम का मणि दिया। और जिस समय यह मणि दिया सूर्य्य देवता ने कहा कि यह मणि अमूल्य है।

प्रत्येक प्रातःकाल इस से इस की वज़न से अठगुना सोना निकलता है किन्तु जो पवित्र है वही इसे धारण कर सकता है अगर कोई अपवित्र आदमी इसे छुएगा उसकी तुरन्त मृत्यु हो जायगी।

सत्रजित यह मणि लेकर द्वारिका आये। द्वारिका निवासी इस मणि को देख कर आश्चर्य से मुग्ध हो गये उन्होंने उसके प्रकाश को देख कर समझा कि शायद यह सूर्य्य ही है। जब इस मणि को पहन कर सत्रजित कृष्ण से मिलने गये तो कृष्ण बहुत प्रसन्न हुए किन्तु उन्होंने कहा कि अगर ऐसा ही मणि मुझे मिल जाता तो बहुत अच्छा था। कृष्ण के इन विचारों को सुन कर सत्रजित को यह भय हुआ कि कहीं कृष्ण मुझसे यह मणि जबरदस्ती न छीन लें। इस भय से उन्होंने इस मणि को अपने भाई प्रसेन को दे दिया और उसे खबरदार कर दिया कि मनसा वाचा कर्मणा पवित्र रहना नहीं तो यह मणि तुम्हारे नाश का कारण हो जायगा।

एक दिन प्रसेन और कृष्ण शिकार को गये। किन्तु कृष्ण तो लौट आये प्रसेन वापस नहीं आया। सत्रजित ने कहना शुरू किया कि कृष्ण ने मेरे भाई को मार डाला और मणि ले लिया। द्वारिका निवासी भी सन्देहपूर्ण बातें करने लगे। कृष्ण को जब यह पता चला कि उनकी बदनामी हो रही है तो उन्होंने यह निश्चय किया कि जंगल में जाकर देखें कि मणि क्या हुआ।

कृष्ण और कुछ सिपाही मणि की तलाश में जंगल की ओर चल पड़े। थोड़ी दूर जाने के बाद देखते क्या हैं कि प्रसेन और

उसका घोड़ा मरा पड़ा है। देखने से यह भी मालूम हुआ कि किसी शेर ने इन्हें मार डाला है। शेर के पैरों के चिन्ह देखते २ यह लोग आगे बढ़े। थोड़ी देर के बाद इन्हें शेर मरा हुआ मिला किन्तु मणि इस के पास भी नहीं था। गौर से देखने पर मालूम हुआ कि रीछ और शेर से लड़ाई हुई। इस लिये रीछ के पैरों के चिह्न देखते २ यह लोग आगे बढ़े। अन्त में इन्हें एक गुफा मिली जो बिलकुल अँधेरी थी। कृष्ण ने अपने साथियों को तो गुफा के द्वार पर छोड़ा और स्वयं उसके अन्दर गये। यह गुफा ८०० मील लम्बी थी। चलते २ जब गुफा के अन्त में पहुंचे तो इन्हें एक महल दिखाई दिया। यहां इन्होंने देखा कि एक लड़का पालने पर लेटा है और मणि पालने में इस लड़के के खिलाने के लिये लटकाया हुआ है। वहीं एक सुन्दरी कन्या भी बैठी है जो लड़के को पालने पर डोला रही है। कृष्ण और कन्या की आंखे चार होते ही एक दूसरे पर मोहित हो गये। कन्या ने कृष्ण से कहा कि तुम अगर मणि के लिये आये हो तो मणि लेकर भाग जाओ शोर न मचाओ क्योंकि अगर मेरा पिता जामवन्त जगेगा तो तुम्हे मार ही डालेगा। कृष्ण ने इसकी परवाह न की बल्कि अपना शंख जोरों से बजाया। जामवन्त जाग पड़ा और आपस में लड़ाई आरम्भ हो गई।

गुफा के द्वार पर बैठे हुए लोगों को इन्तजार करते करते जब बहुत दिन हो गये तो उन्होंने यह समझा कि कृष्ण मार डाले गये।

यह लोग द्वारिका वापस आये और कृष्ण का क्रिया कर्म करने लगे।

जामवन्त और कृष्ण में २१ दिन तक लड़ाई होती रही। अन्त में जामवन्त को कृष्ण ने हरा दिया जामवन्त ने प्रसन्न होकर अपनी कन्या और दायज में वही मणि कृष्ण को भेट किया। कृष्ण जामवन्ती और मणि को लेकर द्वारिका वापस आये और यादवों की सभा करके उसमें उन्होंने सारा हाल कह सुनाया। मणि सत्रजित को वापस दिया। सत्रजित ने कृष्ण को जो बदनामी की थी उस पर उसे बहुत पश्चात्ताप हुआ। उसने अपनी कन्या सत्यभामा का कृष्ण के साथ विवाह कर दिया और कृष्ण और सत्रजित मित्रता से रहने लगे।

स्यमन्तकमणि जब फिर सत्रजित के पास आया तो शतधन्व और अक्रूर ने इस पर अपने दान्त लगाये सत्रजित को मार कर इस मणि को छीन लेने की तरकीबें सोचने लगे। एक दिन जब कि कृष्ण हस्तिनापुर मे थे और सत्यभामा अपने पिता के घर में थी इन दोनो ने आकर सत्रजित को मार डाला और मणि लेकर चम्पत हुए।

सत्यभामा ने अपने पिता की मृत्यु और स्यमन्तकमणि की चोरी का किस्सा कृष्ण से कहा। कृष्ण और बलराम दोनो शतधन्व को मारने के लिये चले। शतधन्व ने जब यह किस्सा सुना तो उसने मणि अक्रूर को दे दिया जो उसे लेकर बनारस भाग गया और स्वयं दक्षिण को रवाना हो गया। कृष्ण ने

शतधन्व का पीछा किया और उसे मार डाला किन्तु मणि नही पाया। जब कृष्ण विना मणि के वापस आये तो प्रजा को और बलरामजी को भी यह शंका हो गई कि कृष्ण ने मणि अपने पास रख लिया है। कृष्ण को यह समाचार सुन कर वडा खेद हुआ। यह चिन्ता में वैठे हुए थे कि नारद जी आये नारदजी से इन्होंने पूरा हाल कहा। तब नारदजी ने इन से बताया कि आपने भादों की चौथ को चन्द्रमा देखा है इस कारण आप पर इस प्रकार कलङ्क लग रहे हैं। आप गणेश जी की विधिवत पूजा कीजिये उस से आप की बदनामी दूर हो जायगी। कृष्ण ने नारद से पूछा कि भादों को चौथ को देख लेने से कलङ्क क्यों लगता है। नारद ने कहा कि एक समय गणेश जी लड्डू हाथ में लिये हुए स्वर्ग जा रहे थे। रास्ते में चन्द्रलोक पड़ा। यहां पहुंचे तो ठोकर खा कर गिर पड़े इस पर चन्द्रमा हंसे पड़े। गणेश जी को क्रोध आया उन्होने उसे यह शाप दे दिया कि जा तेरा मुह जो कोई भी देखेगा कलङ्की कहलायेगा। चन्द्रमा यह शाप सुन कर पश्चाताप से कमल संपुट में अपना मुह छिपा बैठ गई। चन्द्रमाके अभाव से देवताओं में खलबली मच गई सबों ने ब्रह्मा से जा कर स्थिति बताई। ब्रह्मा ने कहा कि गणेश की स्तुति के अतिरिक्त चन्द्रमा से इस कलंक और शाप को मिटाने का कोई मार्ग नहीं हैं। ब्रह्मा ने यह भी बताया कि पूजा कैसे होगी। वृहस्पति ने गणेश पूजा विधि चन्द्रमा कों बताई चन्द्रमा ने गणेश की पूजा की। गणेश जी प्रसन्न

हुए। अपना पूरा शाप तो इन्होंने वापस नहीं लिया किन्तु इसका प्रभाव परिमित कर दिया और अपना अन्तिम शाप यह निश्चित किया जो केवल एक रोज अर्थात् भादो की चौथ को चन्द्रमा का मुख देखेगा वही कलङ्कित होगा।

किन्तु इस कलङ्क को मिटाने का भी उपाय बता दिया वह यह कि कृष्ण पक्ष भादो की चतुर्थी को गणेश की पूजा करने से कलङ्क दूर हो जाता है।



नाग पञ्चमी।

सावन महीने की शुक्ल पक्ष की पञ्चमी नाग पञ्चमी कहलाती है। इस पञ्चमी को नाग की पूजा की जाती है। इस दिन दरवाज़े के दोनों तरफ़ गोबर से नागों का चित्र खींचा जाता है। जल, दूध और घी से इनका स्नान कराया जाता है और गेहूं दूब, धान की खील दही दूध आदि से इनका पूजन किया जाता है। अगर कहीं सांप की भीट होती है तो वहां उन्हे दूध चावल आदि से पूजा सत्कार किया जाता है। काले रंग के सर्प की विशेष पूजा लिखी है। इस पूजन का फल यह लिखा है कि इसके करने से सप्त कुल पर्यन्त सांप से भय नहीं रहता। एक विशेष मंत्र के भय से सर्प के विष से आदमी बच जाता है।

इसके बारे में दो कथाएँ कही जाती हैं। किसी ब्राह्मण के सात बहुऐं थी। छः के तो नैहर था किन्तु जो सब से छोटी थ उसके नैहर में कोई नहीं था। जब सावन का महीना आया तो सब बहुओं को तो उनके नैहर वाले आकर ले गये किन्तु सातवी के कोई था ही नहीं। उसने कहा कि शेषनाग के अलावा हमारा और कौन है। शेषनाग को इस स्त्री की इस करुणापूर्ण दशा पर बहुत दया आई। इस लिये उन्होंने एक वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण किया और उक्त ब्राह्मण के यहां जाकर कहा कि तुम्हारी

कनिष्ट बहू मेरी भतीजी है उसे तुम मुझे विदा कर दो। ब्राह्मण ने इन्हे कभी देखा तक नहीं था। इस लिये बड़ा आश्चर्य हुआ। ब्राह्मण ने अपनी बहू से इसके बारे में पूछा। यह विचारी सुसराल में रहते रहते इतनी दुखी हो गई थी कि इसने कहा कि हां मै जानती हूं। शेषनाग इस तरह से ब्राह्मण का रूप धारण कर के इस बधू को बिदा करा लाये थोड़ी दूर चल कर जब यह किसी बिल के पास पहुंचे तो अपना असली नाग रूप धारण कर लिया। लड़की को परेशानी तो हुई किन्तु समझाने पर यह शेषनाग के फण पर सवार हो कर नागलोक को चल दी। नागलोक में जाकर यह लड़की रहने लगी। शेषनाग ने और नागों से यह कह दिया था कि कोई इसे न काटे। इस लिये यह मजे में शेषनाग के यहां रहा करती थी। एक दफा ऐसा हुआ कि शेषनाग के यहां बच्चे पैदा हुए। छोटे छोटे बच्चे ज़मीन पर रेंगने लगे। यह घबड़ाई। इस लिये शेषनाग की स्त्री ने इस लड़की से कहा कि तुम अपने हाथ में पीतल का चिराग लटकाये रहो इससे तुम्हें भय न होगा किन्तु एक दफा इसके हाथ से चिराग़ गिर गया जिससे कई सापों की पूछें कट गई। मामला उस समय रफ़ा दफ़ा कर दिया गया। थोड़े दिन रह कर यह फिर अपनी ससुराल चली आई। श्रावण की पञ्चमी को इसे अपने नाग भाई याद आये। इसने एक पीठ पर नाग की तसवीर बना कर उनकी पूजा की और परमात्मा से प्रार्थना करने लगी कि वह नाग भाइयों को प्रसन्न और जीवित रखे। उधर श्रावण पंचमी

को शेषनाग के पुंछकटे लड़कों ने अपनी माता से अपनी पूंछ के नाश होने का कारण पूछा माता ने पूरा किस्सा बता दिया। नागों को बड़ा क्रोध आया और वे इससे बदला लेने के लिये इसके घर पर आये। सौभाग्यवश जिस समय यह नाग लोग इसके घर पर पहुंचे उसी समय यह लड़की नाग भाइयों के कुशल क्षेम की प्रार्थना कर रही थी। इस बात को देख कर क्रुद्ध नागों का दिल पसीज गया और वे प्रसन्न हुए। इसने अपने नाग भाइयों को दूध चावल खाने को दिया। चलते समय यह लोग इसके लिये एक मणिमाला छोड़ गये जिसके प्रभाव से यह आनन्द पूर्वक रहने लगी।

दूसरी कथाः—

यह है कि, एक किसान खेत जोत रहा था। अकस्मात उसके हर का फार किसी सांप के बिल में धँस गया जिससे उस बिल में जितने साप थे मर गये। थोड़ी देर में जब उन सापों की मा वापस आई, अपने बच्चों को मरा पाकर उसने किसान के सारे कुटुम्ब को काट लिया। किन्तु उसका क्रोध शान्त नहीं हुआ। उसे यह मालूम हुआ कि इस किसान के एक कन्या है। उसे मारने के लिये यह उसके घर को चली। जब नागिन इसके घर पहुंची यह शेषनाग को पूजा कर रही थी। थोड़ी दूर पर चन्दन अच्छत और दूध

रखा हुआ था। नागिन ने चन्दन अपने शरीर में लगाया इत और चावल पान किया। तबीयत ठण्डी हुई और अपनी इस प्रकार से पूजा सत्कार देख कर नागिन लड़की से विशष रूप से खुश हो गई। जब लड़की ने ध्यान के पश्चात अपनी आखें खोली तो उसे अपने कुटुम्ब के नाश का समाचार मिला। लड़की को बड़ा दुख हुआ उसने नागिन से प्रार्थना की कि उसके कुटुम्ब को जिला दे। नागिन प्रसन्न थी ही उसने अमृत दिया जिसको पिला कर इस लड़की ने अपने सारे कुटुम्ब को फिर से जिला दिया। कहते हैं कि उस समय से श्रावण पञ्चमी को हल चलाना मना कर दिया गया है और किसी शाक पात काटने की इजाजत नहीं है उसी समय से नाग की पूजा भी शुरु हुई है।

कपिला षष्ठी।

यह त्योहार ६० वर्ष में एक दफ़ा पड़ता है कहते हैं इस दिन नारदजी को नारद का रूप मिला था। नारद मुनि बाल ब्रह्मचारी हैं। किन्तु एक बार इन्हें गंगा में स्नान करते हुए मछलियों को आपस में क्रीड़ा करते हुए देख गृहस्थ जीवन में रहने की इच्छा पैदा हुई। इन्होने चाहा कि कहीं विवाह हो जाय तो अच्छा हो। किन्तु इनके पास रुपया पैसा था नहीं। कन्या का मिलना इन्हें असम्भव सा ही मालूम होने लगा। इन्होंने अपने दिल में सोचा कि चलो कृष्ण के पास चलें उसके १६ हजार १०८ रानियां हैं अगर वह उनमें एक रानी भी दे डालेंगे तो उन्हें दिक्कत भी न होगी और मेरा काम चल जायगा। यह विचार करके नारद द्वारिकापुरी चले। कृष्ण से आ कर कहने लगे कि आप के पास जरूरत से ज्यादा रानियाँ हैं आप इतनी रानियों के पास जा भी न सकते होंगे इस लिये हमें कम से कम एक दे दीजिये। कृष्णजी ने कहा जाओ और जहां तुम देखो कि मैं न हूं उस घर की स्त्री ले जाओ। नारद ने सारा रनवास छान डाला। इन्हें एक भी ऐसा स्थान न मिला जहां कृष्ण न हो। निराश हो कर वापस आ रहे

थे कि संध्या का समय आ गया जप बन्दना आदि करने के लिये यह गङ्गा के किनारे चले, किन्तु मन में विवाह करने का ही बिचार मौज मार रहा था। जैसे तैसे गङ्गा के किनारे पहुंचे। स्नान करने के लिये नदी में उतरे लेकिन मन में यही सोच रहे थे कि कृष्ण के पास जा कर एक स्त्री मागनी है! नारद इन विचारों में डूबे हुऐ थे और स्नान कर रहे थे किन्तु इन्होंने ज्यों ही दूसरा गोता लगाया और उठे तो तरन्तु ही पुरुष से यह स्त्री हो गये। नारद से नारदी बन गये। आश्चर्य और विस्मय से परेशान ज्योंही यह बाहर निकले इन्हें एक सन्यासी मिल गया। इन्हे पकड़ ले गया और इनके साथ उसने जबरदस्ती बिवाह कर लिया। ६० वर्ष तक नारदी के साथ यह सन्यासी रहता रहा। ६० वर्ष में नारदी के ६० लड़के पैदा हुए।* लड़कों के सेवा शुश्रूषा से दुःखित नारदी को गृहस्थ जीवन से बड़ा दु.ख हुआ और यह भगवान से प्रार्थना करने लगी कि इस महान दुःख से निवारण करो। विष्णु भगवान ने दर्शन दिया और नारद के हृदय में

* नारदी के साठ पुत्रः—
प्रभव; विभव; शुक्ल; प्रमोद; प्रजापति; आङ्गीरा; श्रीमुख, मव, युव; धन, ईश्वर; बहुधान्य; प्रमाथी; विक्रम; वृष, चित्रभानु; सुभानु; तारण; प्रार्तिव व्याय; सर्वजित; सर्वधारी; विरुधि; विकृति; खर; नन्दन; विजय; जय; मनमथ; दुरमुख; हेमलम्बी; विलम्बी; विकारी; शरवरी; प्लव; शुभकृत; शुभान; कुधि; विश्ववासु विरुधिकत; परिधावी; प्रमादी; अनन्द; राक्षस: नल; पिगल; कलयुक्त; सिद्धार्थी; रौद्र; दुरमति; दुन्दुभि; रुधिरोदगामी, रक्ताक्षि क्रुधन; क्षय; आदि

गृहस्थ बनने की जो अभिलाषा पैदा हुई थी उसकी असत्यता का उपदेश दिया। इतने में उनके साठों लड़के इकट्ठे हो गये और चिल्लाने लगे। कोई खाना मांगने लगा कोई पानी, नारदी ने विष्णु भगवान से प्रार्थना की कि इन बच्चों को चुप कीजिये। विष्णु ने इन बच्चों को एक एक पर राज्य दिया और नारदी को फिर नारद बना दिया। हर एक साल पर इन ६० बच्चों मे से एक न एक का अधिकार होता है और कपिलाषष्ठी के बाद फिर नये सिरे से पारी शुरू होती है।

शीतला षष्ठी।

माघ शुक्ल छटी को यह त्योहार मनाया जाता है। इसके सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि एक ब्राह्मण था जिसके एक स्त्री एक पुत्र था और एक पुत्र बधू थी। ब्राह्मण के कोई पौत्र नहीं। इस लिए ब्राह्मण और उसके सारे कुटुम्ब ने साल भर तक बराबर छठी की स्तुति की जिसके प्रभाव से उसकी पुत्रवधू गर्भवती हुई, किन्तु साल भर से ज्यादा गर्भवती हुए हो गया कोई बच्चा पैदा न हुआ। एक दिन उसकी बधू नदी पर स्नान करने आई वहां अकस्मात् फिसल कर गिर गई जिससे उसके पेट से कुम्हड़े के बराबर एक थैला निकल पड़ा। बहू ने घर आकर अपनी

सास से पूरा हाल कह सुनाया। ब्राह्मण उस थैले को घर ले गया और वहां खोल कर देखा तो मालूम हुआ कि उसके अन्दर सात बच्चे थे। ब्राह्मण ने इन्हे पालना आरम्भ किया जब यह बड़े हुए और विवाह करने योग्य हुए तो इनकी माता ने प्रण कर लिया कि अगर इनका विवाह होगा तो उसके यहां जिसके ६० कन्याएं हों। बुड्ढा ब्राह्मण इस प्रण को सुन कर ऐसे आदमी की तलाश में निकला भाग्यवश इसे थोड़ी दूर चल कर एक ऐसा कुटुम्ब मिल गया जिसके यहां ६० कन्यायें थी किन्तु जो दायज के कारण इनका विवाह करने में असमर्थ था। विवाह निश्चित हुआ और हो गया। जब कन्याएं बहू होकर अपने ससुराल आईं तो एक दफा शीतला षष्ठी पड़ी। इस रोज विशेष रूप से जाड़ा था ब्राह्मणी ठण्डे पानी से जाड़े के मारे नहाना नहीं चाहती थी इस लिये उसने अपनी पौत्र वधूओं से कहा कि पानी गरम कर दो। यह बात शीतला षष्ठी के दिन वर्जित है फिर उसने कहा कि हमारे लिये चावल बना दो। यह भी निषिद्ध है इस लिये पुत्र वधुओं ने कुछ इन्कार किया किन्तु बुड्ढी ब्राह्मणी बहुत नाराज हुई। क्रोध के डर से पौत्र वहुओं ने उसकी आज्ञा का पालन किया। परिमाण यह हुआ कि दूसरे दिन उसका सारा कुटुम्ब उसकी गायें इत्यादि मरी हुई मिलो। ब्राह्मणी ने विलाप करना आरम्भ किया। षष्ठी देवी ब्राह्मणी का रूप धर कर आईं और कहा कि अपने कुटुम्ब के हर एक व्यक्ति पर भात लगा कर उसे गरम पानो से नहला दो जैसा तुमने स्वयं कल किया था और

सब फिर जीवित हो जावेंगे। इस बात को सुनकर ब्राह्मणी को बड़ा पश्चात्ताप हुआ। फिर षष्ठी देवी ने कहा कि शीतला षष्ठी को दही और इमली मिलाकर कुत्ते को टीका देना और यही अपने कुटुम्ब के हर एक व्यक्ति के साथ करना। बच्चों के हाथ में इमली Turmeric बांधना। यह कह कर ब्राह्मणी अन्तर्ध्यान हो गई बुढ़िया ने वैसाही किया जिससे सब लोग फिर जिन्दा हो गये उस समय से यह पूजा चली। बंगाल और पूर्वीय भारत में इसका प्रचार है।



गंगा सप्तमी।

वशाख शुक्ल सप्तमी को गङ्गा जी की पैदाइश का दिन माना गया है। इस दिन कहते हैं जन्हु राजा ने क्रोध से गङ्गा को पान कर लिया था फिर दाहिने कान के रंध्र से इसे निकाल दिया था।

(ब्रह्म पुराण)

शीतला सप्तमी।

श्रावण शुक्लपक्ष में सप्तमी के दिन शीतलादेवी के पूजन का दिन है। शीतलादेवी के रूप का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि इनकी सवारी गदहे की है एक हाथ में इनके झाड़ू है और दूसरे हाथ में कलश, सर इनका सूप से अलंकृत है। इनकी पूजा सौभाग्यवती स्त्रियों के लिये बताई गई है इसका फल यह बताया

गया है कि इस से वैधव्य और दरिद्रता नहीं आती। स्त्री पुत्र पौत्रादि से परिपूर्ण होती है। इसके सम्बन्ध में भविष्योत्तर में यह कथा बयान की गई है कि एक राजा की कन्या अपने पति के साथ अपने ससुराल जा रही थी रास्ते में उसके पति को सर्प ने डस लिया। कन्या उसी वन में विलाप कर के रुदन करने लगी। इस पर एक वृद्धा स्त्री ने उसके पास आकर शीतला की पूजा करने की सलाह दी और उस से बताया कि एक मरतबा उसका पति भी सांप के काटने से मर गया था किन्तु शीतला के व्रत से उसका वैधव्य जाता रहा। राजकन्या ने उसकी सलाह मान ली और उसका पति जीवित हो गया

जन्माष्टमी। (कृष्ण जन्म)

भाद्र कृष्ण अष्टमी को होती है। कृष्ण जी का जन्म इसी दिन का माना जाता है। कंस को आकाश वाणी द्वारा यह मालूम हुआ था कि उसका भांजा उसकी मृत्यु का कारण होगा। इस लिये जब वासुदेव के साथ उसने अपने बहन देवकी की शादी की उसी समय उसने यह विचार किया था कि देवकी को ही मार डालूं किन्तु वासुदेव के समझाने पर वह इस बात पर राजी हो गया कि उनके बच्चों को मारा डाला करें देवकी को छोड़ दे। इस लिये कंस ने देवकी और वसुदेव दोनों को कैद कर लिया। उसे जब यह भी मालूम हो गया कि देवकी का आठवां बच्चा उसका प्राणनाशक होगा तो उसे सन्देह हुआ कि आठवें से न जाने कौन से मतलब हो ज्येष्ठ से आठवां गिना जायगा या कनिष्ठ से। इस लिये उसने सब बच्चों को मारना शुरू किया किन्तु जब कृष्ण का जन्म हुआ उस समय कैदखाने के दरवाजे खुल गये सिपाही लोग सो गये और वसुदेव कृष्ण जी को ले कर नन्द जी के यहां दे आये। कृष्ण ब्रज में कैसे रहे, कंस को उन्होंने कैसे मारा, महाभारत में उन्होंने क्या क्या किया इसे अधिकांश हिन्दू जानते हैं। इन्हीं के जन्म के उपलक्ष में कृष्ण जन्माष्टमी मनाई जाती है।

सत्य विनायक।

वैशाख पूर्णिमा को गणेश जी की पूजा सत्यविनायक के नाम पर की जाती है। सत्यविनायक का दूसरा नाम "ओ३म" है। इन से ही सारे संसार की उत्पत्ति मालूम होती है। ब्रह्मा ने नारद से इस व्रत के बहुत ज्यादा महात्म्य बताये हैं। ब्राह्माण्ड पुराण में लिखा है कि दरिद्र सुदामा जब अपनी दरिद्रता से बहुत दुखी हो गये तो उनकी स्त्री ने कहा कि जाकर अपने मित्र कृष्णचन्द्र से कुछ मांग लाओ। नियम के अनुसार मेहमान को अपने साथ कुछ ले जाना चाहिये। सुदामा के घर में तो कुछ था नहीं उनकी स्त्री आस पास से दो तीन मुट्ठी भुने चावल मांग लाई और उसे ले कर सुदामा द्वारका पुरी को सिधारे। कृष्णचन्द्र ने इनका बहुत आदर सत्कार के साथ स्वागत किया और इनसे पूंछा कि तुम हमारे लिये कुछ लाये भी हो। सुदामा कुछ हिचकिचा रहे थे कि कृष्ण जी ने इनके बगल से चावल की पोटली छीन ली और भुने चावल खाना शुरू कर दिये। फिर कृष्ण जी ने सुदामा से पूंछा कि तुम कैसे रहते हो बाल बच्चों का पालन पोषण कैसे करते हो। सुदामा ने लज्जा के कारण

कुछ विशेष उत्तर न दिया केवल इतना कहा कि बिना भिक्षा मांगे ही गुजर होती जाती है। कृष्ण को सुदामा की दरिद्रता तो मालूम ही थी इस लिये इन्होंने इन्हें सत्यविनायक का व्रत करने को कहा और इसी व्रत के प्रभाव से सुदामा का घर धन धान्य से परि पूर्ण हो गया। इसी प्रकार को ब्राह्मण पुराण में मरिम वैश्य की और चित्रभानु मंत्री की भी कथा बयान की गई है जो इस व्रत के प्रताप से दरिद्र से धनी हो गये हैं। जिन्होंने इसका अपमान किया है वह निर्धन और कुष्टी हो गये हैं!

शिव रात्रि।

माघ कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को यह व्रत किया जाता है। इस व्रत में शिव जी का पूजन होता है। इस व्रत में उपवास जागरण और शिवलिङ्ग पूजन होता है।

इसके महात्म के सम्बन्ध में एक कथा यह बयान की जाती है कि म्लेछदेश में एक मांसाहारी निषाद् रहता था। गोह के चमड़े का दस्ताना पहन कर बाणों से वह जानवरों को मारा करता था और यही उस की जीविका थी। माघ कृष्ण की चतुर्दशी के दिन वह शिकार करने के लिये अपने घर से निकला। दैववशात वह एक जगह दिन में क़ैद कर लिया गया किन्तु सायंकाल को छोड़ दिया गया। दिन भर बिना खाये रहा था इस लिये सायंकाल को क्षुधा से पीड़ित था किन्तु अपने घर न जा सका क्योंकि घर पर भी कुछ खाने की सामग्री नहीं थी। इस लिये वह शिकार की तलाश में बन की ओर चला। एक स्थान देखा जहां एक सुन्दर सा तालाब था और जहां रात्रिके समय मृगा पानी पीने के लिये आया करते थे। उसी तालाब के किनारे एक शिव का मन्दिर भी था जिस के ऊपर बेल का वृक्ष लगा था। इसी मन्दिर में बेल के पेड़

की आड़ में यह निषाद बैठ गया और मृगों की इन्तजारी करने लगा। एक पहर रात तक उसे कोई भी मृग मौके से नहीं मिला। जब एक पहर रात बीत गई तो उसे एक जवान स्वरूपा मोटे स्तनो से युक्त चंचल नेत्रों से चारो दिशाओं को देखती हुई एक मृगी आती हुई दिखाई दी। तब उस व्याध ने उसके मारने की तैयारी की। वेलपत्र तोड़ कर शिव पर चढ़ाया और उसका ध्यान कर के मृगी को मारने के लिये बाण खींचा। मृगी व्याध को यम के समान समझ कर बोली कि "हे व्याध तुम मुझे क्यों मारते हो" व्याध ने कहा कि मैं और मेरे सब कुटुम्बी आज प्रातः काल से भूखे हैं। भूख से उनको बुरी हालत है इसलिये मैं तुम्हें मार कर खाना चाहता हूं" किन्तु मृगी को मनुष्य की बोली बोलते देख कर उसे आश्चर्य हुआ और उसने पूछा कि हे मृगी तुम कौन हो और कैसे मनुष्यों की भाषा बोल लेती हो। मृगी ने उत्तर दिया कि पूर्व में मैं स्वर्ग में इन्द्र की सुन्दरी अप्सरा थी, यौवनावस्था में मैंने हिरण्याक्ष महासुर से अपना विवाह कर लिया था। महादेव जी मेरा नाच रोजाना देखा करते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि हिरण्याक्ष से बातें करते २ मुझे देर हो गई और मैं समय पर शिव जी के यहां नाचने को न पहुंच सकी। इस पर शिव जी ने क्रोधित होकर मुझे शाप दे दिया कि जा तू मृगी हो और हिरण्याक्ष मृग हो। फिर कुछ दयालु हो कर शिव जीने शाप की अवधि बारह वर्ष की कर दी। और कहा कि जब तुम दोनों

को परस्पर शोक होगा तो तुम्हारे शाप का अन्त होगा। उसी समय से मैं इस वन में घूम रही हूं। तुम मुझे न मारो क्योंकि एक तो मेरे पेट में बच्चा है दूसरा दुःख से मांस और चरबी मेरे सूख गये हैं। मैं तुम्हारे खाने के योग्य न हूंगी हां अभी थोड़ी देर में यहां दूसरी मृगी आवेगी उसे तुम मार सकते हैं। तुम मुझे जाने दो। इस पर व्याध ने कहा कि अगर तुम भी चली गई और दूसरी मृगी भी न आई तो क्या होगा इस पर उसने कहा कि अगर तुम्हें इसका विश्वास नहीं तो मैं तुमसे प्रतिज्ञा करती हूं कि मैं तुम्हारे घर पर स्वयं कल प्रातःकाल चली आऊंगी और अगर तुम्हें वह मृगी न आवे तो तुम उस समय मुझे मार सकते हो। मृगी ने कसम खाई और कहा जो पापी ब्राह्मण हो के वेद से भ्रष्ट सन्ध्या स्वाध्याय से रहित सत्य शौच से विवर्जित दुष्ट बुद्धि, धूर्त, ग्राम कण्टक, निशील आदि पापियों के होते हैं वह मुझे हो यदि मै कल प्रातःकाल तुम्हारे पास न आ जाऊं। व्याध ने उस मृगी को जाने दिया। जब एक पहर रात और बीती तो उसे सत्रस्त, भय से परेशान बार बार पति को ढूंढती हुई एक दुर्बल मृगी दिखाई दी। व्याध ने फिर महादेव जी पर बेलपत्र चढ़ा और उनका ध्यान कर मृगी को मारने के लिये बाण खींचा।

मृगीने फिर जब व्याध को देखा तो बोली हे व्याध! तुम मुझे न मारो मेरा तेज और बल तो विरह की अग्नि से जल चुका है मुझमें मांस जरा भी नहीं रहा है मुझको मारने से तुम्हारा

भोजन नहीं होगा तुम मुझे छोड़ दो मेरे जाने के बाद यहां एक हृष्ट पुष्ट मृगा आवेगा उसे मारना उसके मारने से तुम्हारा और तुम्हारे कुटुम्ब का कुछ सन्तोष भी हो सकता है। व्याध ने इस मृगी से भी कहा कि अगर तुम चली गई और मृग न आया तो मैं कहीं का भी न रहूंगा इस पर मृगी ने कसम खाई और प्रतिज्ञा की कि मैं सुबह अवश्यमेव तुम्हारे घर पहुंच जाऊंगी। व्याध ने दूसरी मृगी को भी जाने दिया।

जब सूर्योदय को केवल एक पहर रह गये उस समय व्याध ने सम्पूर्ण दिशा और मृगियों के चरणचिह्न को ढूंढता हुआ सौभाग्य बल और दर्प से युक्त एक मदान्ध और मोटा मृग आते हुये देखा। और बाण चढ़ा कर उसे मारने को उद्यत हो गया। मृग ने जब निषाद को देखा तो मृत्यु को निश्चित रूप से आया हुआ समझ कर कहा कि हे मृग ! तुम्हें अगर मुझे मारना हो तो तुम मेरी बात सुन लो फिर मारना। व्याध ने पूंछा क्या करना चाहते हो। मृग ने कहा कि हमारे आने के पहले यहां दो मृगियां आई थीं वह किधर गईं। व्याध ने बता दिया कि हां दो मृगियां यहां पानी पीने को आई थीं मैंने उन्हें मारा नहीं छोड़ दिया। इस पर मृगने कहा, कि यदि उन्हें छोड़ दिया तो तुम मुझे भी छोड़ दो मेरी स्त्री प्रसूता है मुझे वहां जाना परमावश्यक है। व्याध ने कहा कि तुम भी यदि प्रातःकाल आने की प्रतिज्ञा करो तो मैं तुम्हें भी जाने दे सकता हूं। मृग ने कसम खाई और पानी पीकर उसी रास्ते चला

गया जिस रास्ते मृगियां गई थीं। व्याध भी अपने घर गया।

जब प्रातःकाल हो गया और भूख ने उस निषाद को बहुत सताया तो वह इधर उधर देखने लगा। इतने में उसे मृगी आती हुई दिखाई दी। इस मृगी के चारो ओर बच्चे थे। व्याध ने जब इसे मारना चाहा तो मृगी ने रोक दिया और कहा बच्चे वाली मृगी को मारना पाप है। अगर तुम्हे मुझे मारना ही है तो हमे इजाजत दो मैं अपने बच्चे अपने घर पर छोड़ आऊं और फिर तुम मुझे मार डालना। इतने में दूसरी मृगी और मृग भी आ पहुंचे और मृग और मृगियां ने एक दूसरे से अन्तिम भेट की और मरने को तय्यार हो गई। प्रश्न यह था, पहले कौन मरे मृग या मृगियां।

व्याध से यह करुणा दृश्य न देखा गया उसने मृग से कह दिया कि हे मृग ! मैं तुम्हे कदापि न मारूंगा तुम अपने स्थान पर जाओ। हम आज से किसी भी जीव को कष्ट न देंगे। सत्य-धर्म में स्थित हों मैं आज से शस्त्रों का त्याग करता हूं मृग ने कहा कि हम भी अपने बचन से बद्ध है और तुम्हारे सामने मरने को आये हैं। जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो। उसी समय स्वर्ग से पुष्प वर्षा हुई और व्याध और मृगियों को स्वर्ग में ले जाने के लिये एक बिमान आया। मृगराज अपनी तीन स्त्रियों के सहित स्वर्ग को प्राप्त हुआ। दो हरणी और उसके पीछे मृग इन तीन ताराओं से युक्तमृगराशि नक्षत्र आज तक पायाजाता है। दो बालक आगे और पीछे और उसके पीछे तीसरी मृगी निकट वर्तमान है वह नक्षत्रों का राजा अब भी आकाश में पाया जाता है।

(लिंगपुराण)

दीपावली। (दिवाली)

दीवाली के सम्बन्ध में कई कथाएं प्रचलित है। कुछ लोगों का ख्याल है कि इस दिन राजा बलि पृथ्वी को साम्राज्य से वंचित कर पाताल भेजे गये थे। महाराष्ट्र देश में इस दिन स्त्रियां राजा बलि की मूर्तियां बनाती हैं। कुछ लोग कहते है कि इस दिन विष्णु भगवान ने नरकासुर नाम के दैत्य को मारा था और उसी के उपलक्ष में यह त्योहार मनाया जाता है। कुछ लोग इसे लक्ष्मी पूजा का दिन मानते हैं। कुछ लोग कहते है कि इस दिन महाराज विक्रमादित्य का राज्याभिषेक हुआ था। कुछ लोग कहते है लङ्का से वापस आने के बाद महाराज रामचन्द्र जी इसी दिन सिंहासन पर बैठे थे। इस दिन जुवा खेलने के सम्बन्ध में एक पौराणिक कथा यह कही जाती है कि इसी दिन शिव ने पार्वती के साथ जुआ खेला था जिसका नतीजा यह हुआ कि शिव जी के पास जो कुछ था सब हार गये। इस लिये दुखी होकर कैलास छोड़ कर गंगा तट पर निवास करने लगे। कार्तकेय ने जब देखा कि जुवा में सब कुछ हार जाने के कारण महादेव जी व उनके पिता बड़े दुखी रहते हैं तो उन्होंने भी पासा फेंकना सीखा और जब अच्छी

तरह सीख गये तो अपनी माता के पास गये। पार्वती जी कार्तकेय से जुवा में सब कुछ हार गईं। कार्तकेय ने इस तरह से महादेव जी के लिये उनकी हारी हुई जायदाद फिर दिला दी। पार्वती जी को किन्तु यह बात बुरी लगी और इन्हें दुख रहने लगा। जब गणेश जी ने देखा कि जुवा में हार जाने के कारण इनकी माता दुखी रहती है तो इन्होंने भी पासा फेकना सीखा और अपने भाई कार्तकेय को हरा दिया। शिव जी ने फिर गणेश जी से कहा कि पार्वती जी को बुला लाओ जिससे आपस में सुलह हो जाय। गणेश जी चूहे पर सवार गंगा जी के किनारे किनारे जा रहे थे यह नारद को पता चल गया। उन्होंने विष्णु से बता दिया कि गणेश जी पार्वती जी को शिव जी से मेल कराने के लिये बुलाने आ रहे हैं। विष्णु जी उसी समय शिव जी से मिलने आये थे। विष्णु ने फौरन ही पासे का रूप धारण कर लिया। शिव, नारद, रावण और पार्वती ने उसी पासे से जुवा खेलना शुरू किया किन्तु पासा तो विष्णु स्वयं ही थे वार बार पार्वती जी के खिलाफ़ ढुलक जाते थे। पार्वती जी सब कुछ हार गईं किन्तु जब बाद को पता चला कि यह विष्णु भगवान का मज़ाक था तो पहले तो क्रोध में शाप देना चाहा किन्तु अन्तमें समझाने पर प्रसन्न हो कर यह आशीष दी कि जो उस दिन अर्थात दीवाली के दिन जुवा खेलेगा वह साल भर बराबर समृद्ध और प्रसन्न रहेगा।

दुर्गा षष्ठी ।

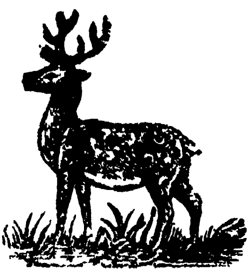
आश्विन शुक्ल पक्ष छठ के दिन दुर्गा ने महादेव जी से कहा कि मुझे लड़का खिलाने और उसे दूध पिलाने की बड़ी इच्छा हो रही है। महादेव जी ने कहा तुम तो सारी संसार की माता हो तुम्हें इस प्रकार इच्छा क्यों होती है। किन्तु दुर्गा ने कहा कि जब तक वास्तव में कोई बच्चा गोद में न हो तब तक अच्छा नहीं मालूम होता थोड़ी देर तक वार्तालाप होती रही अन्त में यह तै पाया कि कार्तिकेय को बुला मंगाया जाय। शिव जी स्वयं कार्तिकेय को बुलाने गये। किन्तु दुर्गा जी को लड़का खिलाने की इतनी ख्वाहिश थी कि इन्होंने एक गुड्डा बनाया और टकटकी लगा कर इसे देखने लगी। विष्णु भगवान को इतने में मज़ाक सूझा वह फौरन ही इस गुड्डे के शरीर में प्रवेश कर गये और गुड्डा जी गया। जब शिव जी कार्तिकेय को ले कर लौटे तो उन्हें दुर्गा की गोद में दूसरे बच्चे को देख कर आश्चर्य हुआ। दुर्गा ने इस बच्चे की उत्पत्ति का पूरा हाल कह सुनाया। शिव जी बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने सारे देवताओं को इस सुन्दर शिशु के देखने के लिये निमंत्रित किया। सब देवता गण जमा हुए शनि अर्थात् सनीचर देवता भी पधारे किन्तु इनकी नजर इतनी खराब थी कि ज्योंही इन्होंने इस बालक

को ज़रा गौर से देखा कि इसका सिर कट कर गायब हो गया। देव-सभा में हाहाकार मच गया। महादेव जी ने गण भेजे कि बच्चे का सर तलाश कर लाओ किन्तु वह सर नहीं मिला। अन्त में महादेव ने कहा कि जो कोई भी जानवर उत्तर की ओर सर किये हुए सोता हुआ मिले उसका सर काट लाओ। हाथी का एक बच्चा ऐसी अवस्था में मिला। उसका सर गण-लोग काट लाये। शिव जी ने इसी सर को इस शरीर पर रख दिया और यही गणेशजी के जन्म की कथा है। बंगाल में यह माना जाता है कि आश्विन शुक्ल षष्ठी को दुर्गा जी ने गुड्डे को बनाया था।

रक्षा बन्धन।

श्रावण की पौर्णमासी को यह त्यौहार मनाया जाता है। "येन बद्धो वलीराजा दानवेन्द्र महाबलः। तेन त्वामापि वध्नामि रक्षे माचल माचल"। इस मंत्र से रक्षा बांधी जाती है। इसके सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि एक बार देव और असुरों में १२ वर्ष तक बराबर युद्ध होता रहा और समाप्त होता नहीं मालूम हुआ उस समय इन्द्राणी ने इस व्रत को विधिवत कर के इन्द्र के हाथ में रक्षा बांधी जिसके प्रभाव से इन्द्र ने असुरों पर विजय प्राप्त की थी।

(भविष्य पुराण)



उमा महेश्वर व्रत।

यह व्रत भादो की पूर्णिमा को होता है। इसमें महादेव जी की पूजा की जाती है। इसके सम्बन्ध में मत्स्य पुराण में यह कथा कही जाती है कि किसी समय शिव के सर्वश्रेष्ठ भक्त दुर्वासा ऋषि घूम रहे थे कि उन्होंने विष्णु को भी घूमते हुये देखा। शंकर जी की दी हुई बेल पत्र की माला इन्हों ने विष्णु जी को दिया। विष्णु जी ने इस माला को लेकर गरूड़ के कन्धे पर रख दिया इस पर दुर्वासा ऋषि को बड़ा क्रोध आया उन्होंने विष्णु को शाप दिया कि तुमने शिव का अपमान किया है जाओ तुम्हारी लक्ष्मी नाश हो जायगी, और क्षीर समुद्र में गिर पड़ेगी और गरूड़ नष्ट हो जायगा। वैकुण्ठ से तुम्हारा अधिकार जाता रहेगा और तुम आज से निस्तेज हो कर बन बन में फिरने लगोगे। यह शाप के सुनते ही विष्णु अपने पद से भ्रष्ट हो गये। उनकी लक्ष्मी क्षीर समुद्र में गिर पड़ी गरूड़ नष्ट हो गया स्वयं निस्तेज हो कर वन में इधर उधर विचरने लगे। इसी तरह शाप वश विचरते २ जब विष्णु को बहुत दिन बीते तो

भाग्यवश एक दिन उन्हें गौतम मुनि मिल गये। विष्णु ने गौतम मुनि से आंखो में आसू भर के अपनी सारी दुर्दशा और उसका कारण कह सुनाया। गौतम मुनि ने उन्हें उमा माहेश्वर व्रत करने की सलाह दी जिसके करने पर उनका शाप जाता रहा और वह फिर पूर्ववत लक्ष्मी सम्पन्न हुये और वैकुण्ठ का उन्हें अधिकार मिला।



कलाष्टमी ।

भैरव या कालभैरव की उत्पत्ति महादेव जीसे मानी जाती है। यह बड़े भयंकर देवता हैं और रक्त से ही सन्तुष्ट होते हैं। लड़ाई के मैदान में यह बराबर मौजूद रहते हैं यह इतने क्रोधी हैं कि इन्हों ने क्रोध में आकर ब्रह्माका पांचवा मुंह अपने अंगूठे के नाखून से काट डाला था पहले ब्रह्मा पञ्चानन थे अब चतुरानन ही रह गये हैं। कुत्ता इनका बाहन है इन के एक हाथ में तृशूल एक में रक्त पीने का प्याला एक में तलवार और एक में मुरदे का सर है। बनारस इनका खास निवासस्थान माना जाता है।

इन की उत्पत्ति की कथा इस प्रकार कही जाती है कि एक समय देवताओं में इस बात की कथा चली कि कौन देवता सर्व श्रेष्ठ है। ब्रह्मा कहते थे कि हम सर्व श्रेष्ठ हैं। विष्णु कहते थ हम, शिवजी कहते थे हम हैं और इन्द्र अपने को सर्व श्रेष्ठ बताते थे। आपस में इस प्रकार बातचीत हो रही थी ब्रह्मा अपनी श्रेष्ठता पर बहुत जोर दे रहे थे। महादेव जी इस मानते नही थे बल्कि अपने को सर्व श्रेष्ठ बताते थे। इस पर ब्रह्मा को क्रोध आ गया इन्हो ने शिव की निन्दा करनी शुरू

की। कहने लगे शिव को तो मैं ने बनाया और जब बना कर तैय्यार किया तो यह रोने लगा इस लिये मैंने इस का नाम रुद्र रख दिया आज यह मेरी बराबरी कर रहा है इसपर शिव जी को भी गुस्सा आगया उन्होंने तुरन्त ही कालभैरव को पैदा कर दिया और भैरव ने ब्रह्मा का एक सर तुरन्त ही काट डाला फिर शिव ने भैरव को बनारस में जाकर रहने की आज्ञा दी कार्तिक शुक्ल अष्टमी को कालाष्टमी इन्हीं के नामपर मनाई जाती है।

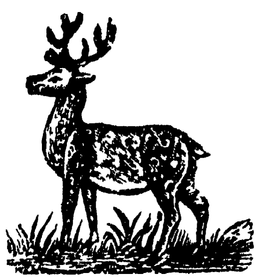


हनूमान जयन्ति ।

चैत की पूर्णिमा को हनुमान जी का जन्म माना जाता है। इन की माता का नाम अञ्जना और पिता का नाम केसरी था। कुछ लोग इन्हें महादेव जी का अवतार मानते हैं। इनके जन्म के सम्बन्ध में यह कथा प्रचलित है कि राजा दशरथ ने पुत्रहीन होने के कारण पुत्रोत्पत्ति के लिये एक यज्ञ किया था। यज्ञ से इन्हे तोन पिण्ड प्राप्त हुए जिन्हें इन्होंने अपने रानियों को खाने के लिये दे दिया। किन्तु एक रानी ने उसे वेपरवाही से कहीं ऐसी जगह रख दिया कि उसे चोल उठा ले गई और ले जाकर उसे वहां गिरा दिया जहां अञ्जना बैठी थी अञ्जना ने उसे खालिया और उसी के प्रभाव से हनुमान जो का जन्म हुआ। इनकी कीर्ति और यश रामायण आदि ग्रन्थों में काफो तौर से वर्णित है और उनका प्रचार भी हिन्दू समाज में काफी है इस लिये उनके बयान करने की कोई आवश्यकता नहीं।

रामनवमी।

चैत्र कृष्ण पक्ष नवमी को रामचन्द्र जी का जन्म माना जाता है। मन्दिरों में चैत्र की प्रतिपदा से ही रामकथा प्रारम्भ हो जाती है। रामनवमी के दिन लोग व्रत करते हैं और राम का गुण गाते हैं।



नवरात्र । (दुर्गापूजा)

आश्विन मास की प्रतिपदा से आरम्भ होता है और नौ दिनों तक मनाया जाता है। देवी उपासक इन नव दिनों में बराबर व्रत रखते हैं। नव दिनो तक बराबर देवी महात्म्य कहा जाता है। नवरात्र समाप्त होने के बाद ही दसहरा होता है। नवरात्र के बारेमें यह कथा प्रसिद्ध है कि जब रामचन्द्र और रावण में युद्ध हो रहा था उस समय राम को मालूम हुआ कि रावण में कुछ ऐसी शक्ति है कि जिससे उसका जैसे ही सर कटता है वैसे ही फिर जीवित हो जाता है। यह देख कर राम को भी विस्मय हुआ और देवताओं के भी देवताओं ने जाकर देवी से प्रार्थना की। देवी अश्वनि की प्रतिपदा को आधी रात को देवता की प्रार्थना से प्रेरित हो कर देवी अपनी निद्रासे जगी और उन्होंने राम को रावण के मारने का वर और शक्ति दी। देवतागण देवी की इस महान अनुग्रह से वहुत कृतकृत्य हुए और उन्होने यह निश्चित किया कि जब तक रावण की पूरी पराजय न हो जायगी वहु व्रत करेंगे और देवी की पूजा करेंगे। देवता ने बहुत श्रद्धा और विधि से देवी की पूजा की और जब आठवें रोज़ राम ने रावण

को मार लिया उस समय देवी ने देवताओंको दर्शन दिया। देवता लोग बहुत प्रसन्न हुए उनका बहुत आदर सत्कार किया और नवें दिन बड़ा भारी यज्ञ रचा। इस यज्ञ में देवी के नाम पर उन्होंने अनेक पशुओंका वलिदान किया और अन्य रीतियों से देवी का सत्कार किया। दसवें दिन रामचन्द्र रावण पर विजय प्राप्त करके अयोध्या की ओर चले और दसवां दिन इस लिये विजय यात्रा के उपलक्षमें दशहरा के नाम से मनाया जाता है। राजा महाराजे इस दिन अस्त्र शस्त्रों की पूजा करते हैं और उत्तम उत्तम आभूषणों से अलंकृत होकर निकलते हैं।

नवरात्र में देवी की पूजा की जाती हैं। देवी या शक्ति की कीर्ति और उनके कार्य मार्कण्डपुराण में सप्तशती में विस्तृत रुप से वर्णित हैं। संक्षेप में हम उन्हें यहां पाठको के सूचनार्थ लिखे देते हैं।

सुरथ नाम का एक राजा था। उसके राज्य में प्रजा बहुत सुखी थी किन्तु उसका वज़ीर दुष्ट था। वह उसके दुशमनों से मिल गया। सुरथ के शत्रुओं ने राजा पर आक्रमण कर दिया राजा की पराजय हुई। सुरथ शिकार खेलने का वहाना करके जंगल में चले गये। जङ्गल में इन्होंने एक रम्य स्थान पर एक महात्मा की कुटी देखी महात्मा ने राजा को आते हुये देख कर उनका यथा योग्य सत्कार किया। किन्तु राजा का चित्त सिंहासन से भ्रष्ट होजाने के कारण विक्षिप्त हो रहा था वह वहां से उठे और जङ्गल के एक कोने में फिर घूमने लगे।

वहां उसे समाधि नाम का एक बनिया घूमते हुये मिला। समाधि भी बड़ी परेशानी की हालत में था। राजा ने उसे अपने ही समान त्रिक्षिप्त देख कर पूंछा, कि तुम कौन हो। उसने उत्तर दिया कि मैं समाधि नाम का बनिया हूं। धनी वंश में पैदा हुआ था किन्तु मेरे पुत्रों और सङ्ग सम्बन्धियों ने धन की लालच से मुझे अपने घर से निकाल दिया है और मैं आज जङ्गल में मारा मारा फिर रहा हूं। मुझे अपनी स्त्री का हाल नहीं मिलता कि वह कैसी है और न अपने पुत्रों का ही कुशल सम्बाद मिलता है। इस कारण मैं और भी परेशानी में हूं। मुझे जङ्गल की तकलीफें इतनी असह्य नहीं हो रही हैं जितनी स्त्री पुत्रों का बियोग। राजा ने कहा कि बड़े आश्चर्य की बात है कि जिन पुत्रों ने और कुटुम्बियों ने तुम्हे घर से निकाल दिया उन के लिये तुम इतना शोक कर रहे हो। बनिया ने जवाब दिया कि मैं क्या करूं मेरा मन नहीं मानता और मैं उनके लिये विह्वल हो रहा हूं। ऐसी बातें करते राजा और बनिया दोनों ऋषि के आश्रम पर आगये। और ऋषि के सामने प्रणाम कर के बैठ गये। राजा ने ऋषि से प्रश्न किया कि महाराज क्या कारण कि मैं कि यह वैश्य इस बात को जानते हुये भी कि इसके पुत्रों ने इस के साथ अन्याय किया है उनके लिये इस प्रकार विह्वल हो रहा है। ऋषि ने उत्तर दिया कि हे राजन्! यह महामाया का प्रभाव है। इस मोह माया के प्रभाव से ही यह सारा जगत चल रहा है। इसी देवी का यह

सारा प्रपञ्च रचा हुआ है। राजा ने पूछा कि यह देवी जिस को आप महामाया कहते है कौन हैं और इस का कैसे जन्म हुआ। ऋषि ने कहा कि प्रलय हो जाने के पश्चात जब सारा संसार जलमय हो गया, विष्णु भगवान के नाभि से कमल और कमल से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हो चुकी उस समय विष्णु भगवान शेष-नाग की शय्या बिछा कर योगनिद्रा में सोगये। विष्णुभगवान को योगनिद्रा में सोते सोते हजारों वर्ष बीतगये कि उनके कान की मल से मधु और कैटुभ नाम के दो दैत्य पैदा हुये। मधु और कैटुभ की भयङ्कर सूरत और उनका उग्रबल देखकर कमल योनि ब्रह्मा जी को किसी कदर परेशानी हुई और उन्हों-ने विष्णु को जगाने के लिये उनकी माया की प्रार्थना करनी शुरू की। विष्णु जाग पड़े और इन दैत्यों से पांच हजार बरस तक लड़ते रहे किन्तु इन्हें न मार पाया। तब महामाया ने इन असुरों पर अपना मोहनी मन्त्र डाल दिया जिस से प्रेरित होकर इन्होंने अभिमान में आकर विष्णु से कहा कि तुम हम दोनों से जो वर मांगना हो मांगो विष्णु ने कहा कि मैं यह वर मांगता हूं कि तुम्हें मार डालूं और तुम दोनों मर जाओ। असुरों ने कहा अच्छा तुम हमें वहां मार डालो जहां पानी न हो। विष्णु ने इस पर उन्हें जल से उठा लिया और मार डाला। यह माया का प्रथम अवतार था। इसे महाकाली का अवतार कहते हैं। महाकाली के दश सर और दश पैर बताये जाते हैं। इन का रङ्ग बिलकुल काला बताया जाता है।

दूसरा अवतार महालक्ष्मी का माना जाता है। यह अवतार महिषासुर के मारने के लिये हुआ था। महिषासुर ने अपनी वीरता और पराक्रम से सारा संसार जीत लिया था देवताओं को स्वर्ग लोक से निकाल दिया और वह लोग मृत्यलोक में साधारण आदमियों के समान फिरने लगे थे। तमाम देवताओं ने जाकर विश्णु और महादेव जी से जाकर तमाम स्थिति वर्णन की। देवताओं की दुर्दशा सुन कर विष्णु और महादेव जी दोनों को ही बड़ा क्रोध आया और इन के शरीरों से तेज निकले। जितने देवता थे उन के शरीर से कुछ न कुछ तेज निकला और सब इकट्ठा हो कर एक स्त्री का रूप धारण कर लिया। इस तेज से एक सिंह की भी उत्पत्ति हुई। तेजों से उत्पन्न इस स्त्री को देवताओं ने अपने २ अमोघ अस्त्र प्रदान किये। महालक्ष्मी इस प्रकार से अस्त्र शस्त्र से समलंकृत हो सिंह पर चढ़ कर महिषासुर को मारने के लिये रवाना हुईं और युद्ध कर के इन्होंने इस महिषासुर का वध कर दिया।

तीसरा अवतार महा सरस्वती का है। शंभु और निशंभु नाम के दो दैत्यों ने देवताओं को जीत लिया। इन्द्र को स्वर्ग लोक से निकाल दिया और अन्य देवताओं को भी उनके स्थान से गिरा दिया। देवता लोग इससे दुखी हो हिमाचल पर्वत पर जाकर देवी की स्तुति करने लगे। पार्वती जी इतने में गंगा स्नान के लिये आईं और स्तुति के प्रभाव से उनके शरीर से एक महा सुन्दर स्त्री पैदा होगई यही महा सरस्वती थीं

और इस से इन दैत्यों का वध होना था। जब महालक्ष्मी इन दैत्यों के निकट गईं तो दैत्य लोग इसे देख कर बड़े मोहित हो गये। इन्होंने चाहा कि इस स्त्री के साथ विवाह कर लें इसलिये इन्होंने सुग्रीवनाम के एक दैत्य को इस स्त्री के पास विवाह की बात लेकर भेजा। सुग्रीव असफल वापस गये। इसपर शंभु ने धूम्रलोचन सेनापति के अधिकार में एक प्रवल सेना इस शक्तिको पकड़ने के लिये भेजी। इस देवी ने दैत्यों की सेना का सत्यानाश कर दिया। इस के बाद चंड मुंड दो राक्षस अनन्त सेना लेकर इस देवी को पकड़ने के लिये आये। देवी पर आक्रमण किया। इनके आक्रमण को देखकर यह देवी इतनी क्रुद्ध हुई कि इस का चेहरा काला हो गया और इसके शिर से काली का जन्म हुआ जिसके गले में मुंडकी माला थी और शरीर पर सिंह चर्म था। आखें इसकी लाल थी और जिह्वा बाहर लपलपा रही थी। काली ने दैत्यों की सेना को खाना शुरू करा दिया। और जब हज़ारों का नाश कर चुकी तो चंड सामने आया। काली ने चंड और मुंड दोनो को मार डाला और इनका शिर लेकर महा सरस्वती के पास गई। महा सरस्वती ने इस कार्य के लिये काली को चमंडु की उपाधि दी। चंड और मुंड के मरने के बाद शंभु और निशंभु खुद लड़ने के लिये आगे आये। इस समय देवी के शरीर से दूसरी शक्ति पैदा हुई जिस का नाम चण्डिका था। चण्डिका ने दैत्यों से जाकर कहा कि तुम लोग पाताल लोक में

जाकर रहो किन्तु इन्होंने नहीं माना लड़ाई हुई और दैत्य लोग मारे गये कुछ बचे सो भाग गये। किन्तु रक्तवीज रह गया। रक्तवीज में यह गुण था कि कि अगर उस का एक बूंद भी रक्त जमीन पर गिरता था तो उससे रक्तवीज के समान ही शक्ति वाला दूसरा दैत्य तैयार हो जाता था इसलिये जब रक्तवीज का सर काटा गया तो जितने बून्द खून के ज़मीन पर गिरे उतने ही रक्तवीज तैयार हो गये। इसलिये महासरस्वती ने यह निश्चय किया कि काली रक्तवीज का एक बूंद भी खून ज़मीन पर गिरने न दें। ज्योंही उसके शरीर से खून की धारा निकले काली उसे पी जांय। काली देवी इस पर तय्यार हो गई और इस तरह से रक्तवीज को मारा गया। शंभु और निशंभु दोनों मार डाले गये। देवी ने तीसरा अवतार धारण कर के इस प्रकार देवताओं को स्वर्ग का राज्य दिलाया।

चौथा अवतार नन्द के गृह में हुआ था। इस कन्या का नाम नन्दा था। और इसे कृष्ण के वदले वसुदेव ने कंस को दिया था किन्तु जब कंस ने इसे पत्थर पर पटक कर मारना चाहा तो यह उसके हाथ से छूट कर आकाश में चली गई और वहां से कहा कि हे कंस तुम्हारा घातक पैदा हो गया है।

पांचवां अवतार रक्तदन्ती का है इसमें देवी ने एक दैत्य को दातों से दबोच कर मारा है। छठां अवतार शाखा-

म्बरी का है जिस में देवी ने सौ वर्ष से अकाल पीड़ित प्रजा की रक्षा की थी। सातवें अवतार में दुगम राक्षस को मारा है जिससे दुर्गा कहलाई। आठवीं अवतार मातङ्गी और नवां लभराम्बरी का है। इस में देवी में अरूण राक्षस को मारा था।

(मार्कण्डेय पुराण)

अनङ्ग ।

अनंग अर्थात् कामदेव ब्रह्मा के पुत्र कहे जाते हैं। पैदा होते ही इन्हें यह वर मिला था कि तीनों लोक के सुर और असुरों के हृदय पर इनका वश रहेगा। विष्णु और शिव के हृदय भी इनके प्रभाव क्षेत्र में था। वरदान पाते ही अनंग ने पहले अपने पिता पर ही अपना वाण चला दिया और अपनी सफलता से प्रसन्न होकर इसने एक बार समाधिस्थ शिव पर भी अपना बाण चलाना चाहा किन्तु महादेवजी को क्रोध आ गया और इन्होंने अपने तीसरे नेत्र से कामदेव को भस्म कर डाला। रति इसकी स्त्री थी। महादेवजी के तीसरे नेत्र की ज्वाला से भस्म होकर अङ्गहीन हो जाने से रति को बड़ा दुख हुआ और इसने महादेव जी से बहुत प्रार्थना की जिस पर महादेव जी ने प्रसन्न हो कर उससे कहा कि तुम्हारे पति का फिर जन्म होगा।

दूसरा जन्म कामदेव का रुकमिण के गर्भ से हुआ किन्तु छठी के दिन शम्बर नाम का दैत्य इसे उठा ले गया। शम्बर ने इस बालक को समुद्र में फेंक दिया। समुद्र में इसे एक मछली निगल गई। जब यह मछली पकड़ी गयी तो शम्बर के यहां ही

आई। मछली के पेट चाक करने पर उसके अन्दर से बच्चा निकला। शम्बर ने यह नही पहचाना कि यह वही बालक है जिसे मैं रुक्मिण के यहां से चुरा लाया था इसलिये उसने अपनी कन्या मायावती को दे दिया। मायावती स्वयं रति थी। जब महादेवजी ने इसे प्रसन्न होकर यह बताया था कि तुम्हारा पति तुम्हें फिर मिलेगा तो यह भी बताया था कि वह कृष्ण के घर में जन्म लेगा उसी की प्रतीक्षा में रति ने मायावती का रूप धारण कर लिया था। मायावती ने बालक के लक्षणों से फौरन पहचान लिया कि यह कामदेव है। उसने इसको इस लिये बहुत हिफाजत के साथ पाला और जब यह बड़ा हुआ तो मायावती ने इससे इसके जन्म का पूरा हाल बता दिया कि कैसे शम्बर तुम्हें तुम्हारी माता के यहां से हर लाया और कैसे समुद्र में गिरा दिया इत्यादि। बालक ने जिसका नाम प्रद्युम्न था शम्बर की इस निर्दयता को सुन कर उसे मार डाला। चूंकि यह मछली से पैदा हुए थे इनकी ध्वजा में इस लिये मछली का निशान है। तोते के ऊपर इनकी सवारी है हाथ में इनके फूलों के धनुष बाण है जिसकी ज्या शहद के मक्खियों की है।



कोकिलाव्रत ।

यह व्रत अषाढ़ पूर्णमासी को किया जाता है। जिस साल मलमास पड़ता है उस साल शुद्धा-साढ की पूर्णिमा को होता है। यह व्रत स्त्रियों का ही है और इसकी विधि यह है कि अषाढ़ महीने की पूर्णिमा के सायंकाल से प्रत्येक सौभाग्यवती स्त्री को यह प्रतिज्ञा करनी चाहिये कि मैं एक महीने तक बराबर प्रति दिन स्नान करूंगी ब्रह्मचारिणी रहूंगी। केवल सायंकाल को ही भोजन करूंगी जमीन पर सोऊंगी और प्राणियों पर दया करूंगी। यह भी कहा गया है—प्रति दिन प्रातःकाल इस व्रत को करने वाली स्त्री दतून करने के पश्चात नदी ताल या किसी कुए पर जाकर स्नान करें सुगन्धित आमले का तेल लगावे आठ रोज ऐसा करने के बाद फिर बच का उपटन लगावे और सूर्य्य देवता की पूजा किया करें। इसका फल यह कहा गया है कि स्त्री कभी विधवा नहीं होती।

इसके सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि एक समय दक्ष ने अपने यहां यज्ञ किया और इस यज्ञ में सब देवताओं को निमंत्रित किया किन्तु महादेवजी को नहीं बुलाया। महादेवजी

कैलाश पर्वत पर अपनी तपस्या में मग्न थे और उनको पता भी नहीं था कि दक्ष ने कोई यज्ञ किया भी है। नारद जी दक्ष के यज्ञ में गये हुए थे, उन्होंने जब दक्ष के यहां महादेव जी को अनिमंत्रित देखा तो उन्हें बुरा मालूम हुआ वह यज्ञ शाला से उठ आये और महादेव जी के पास जाकर सब हाल कह सुनाया, महादेव जी ने जब अपने अपमानकी यह कथा सुनी तो उन्हें क्रोध आया। उन्होंने दक्ष को इस अपमान के लिये दण्ड देने का विचार किया किन्तु पार्वती जी ने कहा कि तुम कुछ न करो मैं स्वयं जाकर अपने पिता को उन के इस अनुचित कार्य के लिये दण्ड दूंगी। यह कहकर गणेश जी को लेकर पार्वती जी और नारद जी दक्ष की यज्ञशाला के लिये रवाना हुये जब पार्वती जी दक्ष के यहां पहुंचीं तो इनको किसी ने भी न पूछा। यह दरवाजे पर खड़ी रहीं और किसीने इन को नहीं बुलाया। इस पर गौरी को बड़ा क्रोध हुआ और उन्होंने विचार किया कि मेरे जीने से अब क्या फ़ायदा। यह विचार कर वह हाहाकार करके यज्ञाग्निमें कूद पड़ीं। गणेश जी ने माता की यह दशा देख कर दक्ष और वहां एकत्रित अन्य देवताओं को मारना शुरू कर दिया। नारद जी ने जब यह देखा कि दक्ष का यज्ञ भङ्ग हो गया और गणेश जी के साथ सारे देवता लड़ाई कर रहे हैं तो वह फौरन ही फिर शिव जी के पास पहुंचे और उन से सब हाल कह सुनाया। महादेव जी इस बात पर बहुत क्रुद्ध हुये।

और उन्होंने अपनी जटा फटकारी। इस जटा से वीरभद्र नाम का एक लाल लाल आंख वाला अति विकट पुरुष पैदा हुआ। और महादेव जी से पूछा कि जो आज्ञा हो बताइये। महादेव जी ने आज्ञा दी कि जाओ दक्ष के यज्ञ में जितने देवता हों उनको मार डालो और दक्ष का भी सर काट लो। वीर भद्र ने यज्ञशाला में आ कर देवों से युद्ध आरम्भ कर दी और थोड़ी ही देर में उसने अनेक देवताओं को मार डाला अनेकों को घायल किया और जो बचे उन्हें भगा दिया। दक्ष का सर काट कर वह शीघ्र ही महादेव जी की जटा में जाकर प्रवेश कर गया। महादेव जी को थोड़ी देर के बाद जब तसल्ली हुई और उनका क्रोध ठण्डा हुआ तो ब्रह्मा और विष्णु ने आकर उनसे प्रार्थना की देवताओं के मरने से बड़ी हानि हुई है आप इन पर कृपा करें। जो मरे हैं उन्हें जिला दीजिये जिनके अङ्ग कटे हैं उन्हें पूर्णाङ्ग कर दीजिये। इस पर महादेव ज़ी फिर प्रसन्न हो गये उन्होंने सब को जिला दिया! और जिनके हाथ पैर टूटे थे उन्हें पूर्णाङ्ग कर दिया। किन्तु यज्ञ विघ्न कारणी पार्वती को नहीं जिलाया। उन्हें यह शाप दी कि जाओ पक्ष योनि को प्राप्त हो कर कोकिला हो। पार्वती जी इस लिये नन्दन बन में दश हज़ार वर्ष तक कोकिला रूप धारण करके विचरने लगीं। और फिर इस मनुष्य जन्म पाकर महादेव जी की अर्धाङ्गनी बनीं। उसी समय से आषाढ मास के उत्तम मलमास में यह व्रत चला है।

होली ।

फाल्गुन की पूर्णिमा को यह त्योहार मनाया जाता है भविष्योत्तर पुराण में इसे फाल्गुन पूर्णमोत्सव कहा गया है। इसकी उत्पत्ति का कारण इसी पुराण में इस तरह बयान किया गया है कि सतयुग में पृथु नाम का एक राजा था। यह राजा बहुत प्रतापी और यशस्वी था प्रजा को अपने पुत्रों के समान पालता था। इसके राज्य में न दुर्भिक्ष पड़ता था न कोई बीमारी आती थी, और न कोई अकाल मृत्यु होती थी। किन्तु एक दिन ऐसा हुआ कि तमाम प्रजा पृथुराजा के द्वार पर इकट्ठी होकर त्राहि त्राहि पुकारने लगी। राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ कि आखिर यह एक दम से प्रजा पर कौन सी आफत आ गई। राजा को, पूछने पर मालूम हुआ कि उसके राज्य में ढौंठा नामी राक्षसी आती है और रात के समय या दिन को किसी वक्त बच्चों पर आक्रमण करती है जिससे वे बीमार पड़ जाते हैं या मर जाते हैं। राजा को ढौंठा राक्षसी की यह कथा सुनकर बड़ा विस्मय हुआ और इसने अपने पुरोहित वशिष्ठ जी से पूछा कि यह ढौंठा कौन है और इसके मारने के कौन उपाय हो सकते हैं। वशिष्ठजी ने ढौंठा का पूरा इतिहास राजा पृथु को कह सुनाया कि

यह ढौंठा राक्षसी मालिन राक्षस की लड़की है। इसने एक समय महादेव जी को प्रसन्न करने के लिये बहुत उग्र तप किया था। महादेव जी ढौंठा के तप से बहुत प्रसन्न हुए और उससे बोले कि तुझे जो कुछ वर मांगना हो मांग। ढौंठा ने कहा कि आप मुझे यह वर दीजिये कि मुझे न तो कोई सुर न असुर न मनुष्य और न शस्त्र मार सके। महादेव जी ने एवमस्तु कह दिया किन्तु अन्त में यह भी कहा कि उन्नमत बालकों से तुम्हें भय अवश्य रहेगा। इसलिये महादेव जी के इन बचनों को याद करके ढौंठा राक्षसी हमेशा बच्चों को पीड़ा पहुंचाया करती है। वशिष्ठ जी ने इसके बाद राजा पृथु को इस राक्षसी का निवारण करने का उपाय बताया। उन्होंने कहा कि फाल्गुन पूर्णिमा को आप बहुत बड़ा उत्सव मनाइये। सब लोगों को अभयदान दे दीजिये। सबलोगों को यह अधिकार दे दीजिये कि जो उनके दिल में आवे वह कर सकते हैं। बच्चे लोग प्रसन्न चित्त खूब प्रसन्न चिल्लाते हुए समरोत्सुक बीर के समान एक स्थान पर लकड़ी, कंडा इत्यादि इकट्ठा करके जलावें। तालियां बजावें इस अग्नि की तीन बार परिक्रमा करें, गावें और हंसें। इन शब्दों को सुन कर ढौंठा राक्षसी भाग जायगी और नजदीक न आवेगी। रात्रि के समय बच्चों की रक्षा करने का, उनके उपटन लगाकर उनको स्वच्छ करने का भी इस उत्सव में आदेश दिया गया है। भविष्योत्तर पुराण के अनुसार होली का उत्सव उसी समय से चला है। और इसे ढेरी भी इसी कारण से कहते हैं।

इसकी उत्पत्ति का दूसरा कारण होलिका और प्रहलाद की कथा कही जाती है। हिरण्यकश्यप राक्षस नास्तिक था, वह विष्णु की भक्ति में विश्वास नही करता था उसके विपरीत उस का पुत्र प्रहलाद विष्णु का अनन्य भक्त था। अपने पुत्र की भक्ति और श्रद्धा की परीक्षा करने के लिये हिरण्यकश्यप ने अपने पुत्र पर अनेक अत्याचार किये। कभी तो उसे कुम्हार के आवे में रख कर जलवाया, कभी पहाड़ पर से गिराया किन्तु हर एक इन कठिनाइयों में प्रहलाद की भक्ति अटल रही और विष्णु भगवान ने उसे तमाम कष्टों से निवारण किया। जब हिरण्यकश्यप प्रह्लाद के आस्तिकता से बहुत परेशान हुआ तो उसने अपनी बहन होलिका को यह आज्ञा दी कि प्रह्लाद को लेकर अग्नि में बैठ जाओ जिससे प्रह्लाद जल कर मर जावे। होलिका ने ऐसा ही किया। किन्तु अपने विश्वास और भक्ति के कारण से प्रह्लाद तो अग्नि से भी बच गया किन्तु बेचारी होलिका जल कर भस्म हो गई। उसी समय से कुछ लोगों के मतानुसार होलिका दहन का उत्सव आरम्भ हुआ है यह उत्सव एक प्रकार से विष्णु भक्ति के विजय की खुशी मनाने के लिये और विष्णु के विरोधियों की निन्दा करने के लिये किया जाता है।

पाठकों को यह तो मालूम ही होगा कि इस उत्सव पर घृणित गालियां बहुत बकी जाती हैं भविष्योत्तर पुराण के अनुसार तो यह गालियां वशिष्ठ जी के इस आदेश के अनुसार

कि "लोगों के मनमें जो कुछ आवे कहें" दी जाती है जिससे ढौंठा राक्षसी भाग जाय और दूसरी कथा के अनुसार होलिका को और उसकी जाति (Sex) के व्यक्तियों को इसलिये दी जाती है कि उसने प्रह्लाद ऐसे सत्याग्रही भक्त को ज़िन्दा ही भस्म करने का प्रयत्न किया था, किन्तु गालियों की मात्रा बाज़ बाज़ प्रान्तों में इस हद तक बढ़ी है और विशेष कर गावों में पुरानी चाल के आदमियों में इतनी ज्यादा पाई जाती है कि मेरा विचार यह होता है कि मैं होलिका दहन उत्सवके वर्णन के साथ ही साथ और देशों में गालियों और अश्लील बातों से परिपूर्ण दो एक त्योहारों का वर्णन करके यह दिखाऊं कि ऐसे त्योहार किस श्रेणी के राष्ट्र में और किस अवस्था में पाये जाते हैं।

अश्लील गान और अश्लील बातें बकने की प्रथा भारतवर्ष के लिये ही नई नहीं है। जहां जहां असभ्यता और नीचता का प्राबल्य रहा है इस प्रकार की बातें होती हैं। आज भी जो क़ौमें असभ्य हैं इस प्रकार के त्योहार मनाती हैं, आज कल जो राष्ट्र सभ्य हो गये हैं उन्होंने भी अपनी असभ्यता की अवस्था में इस प्रकार के त्योहार मनाये हैं। मैं उदाहरण के लिये अंगरेज़ और फ्रांसीसी क़ौम के उस त्योहार का वर्णन करूंगा जो बिलकुल होली से मिलता जुलता है।

इङ्गलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी और वेलजियम देशों में छः जनवरी को एक त्योहार मनाया जाता था जिसे Festival of fools अर्थात् मूर्खों का त्योहार कहते थे। इस त्योहार में

लोग हर एक गांव में इकट्ठा हो कर अपना एक प्रमुख चुनते थे। उसे "दाल का राजा" King of the Beans कहते थे। यह राजा अपनी एक रानी स्वयं चुनता था वह Queen of the Beans कहलाती थी। निर्वाचन का काम समाप्त होने के बाद सब लोग इस राजा और रानी को प्रणाम करते थे और वह कुटुम्ब को आशीर्वाद देते थे। इस के बाद गांव भर के या कुटुम्ब भर के सब आदमी इकट्ठा होकर शराब पीना शुरू करते थे और बैठे २ बराबर घंटों शराब पीते रहते थे। जब जब राजा या रानी शराब पीते थे। सब लोग ज़ोर से चिल्लाते थे "राजा पी रहे हैं" "रानी पी रही हैं" अगर कोई आदमी समय पर चिल्लाने में चूक गया या पिछड़ गया; तो उस का मुंह काला कर दिया जाता था या उस के सर पर सींग लगा कर उसे गदहे का स्वरूप बनाया जाता था जब तक यह त्योहार समाप्त नहीं होता था इसको इसी अवस्था में रहना पड़ता था। इस दिन के पहले अर्थात् ५ जनवरी को चौराहे पर अग्निदाह किया जाता था। तीसरे पहर जवान लड़के और लड़कियां गाड़ियों में बैठ कर निकलते थे और इन्धन इकट्ठा कर लाते थे और शाम को यह अग्नि जला दी जाती थी। लोग इसके चारों ओर नाचते थे। इङ्गलैण्ड के लोगों का विचार था कि इस अग्निदाह से फ़सल बहुत अच्छी होती है। और साथ ही साथ इस के प्रभाव से भूत प्रेत का आसेब बिलकुल नष्ट हो जाता था।

दिसम्बर के अन्त में अर्थात् इस त्योहार के ठीक पहले इङ्गलैण्ड तथा स्काटलैण्ड आदि देशों में एक त्योहार और मनाया जाता था जिस में एक King of Mis-Rule "कुशासन राजा" निर्वाचित होता था इसे Abbot of Unreason "अर्थात् दुर्बुद्धि पादरी" भी कहते थे। राजा के दरबार में नवाबों की हवेलियों, धनियों की कोठियों में और ग़रीबों के घर में सभी जगह यह व्यक्ति निर्वाचित होता था। अकसर यह त्योहार तीन महीने तक बराबर जारी रहता था। फ्रांस में Lord of misrule को Festival of fools कहते थे। यह कहीं २६ दिसम्बर को मनाया जाता था और कहीं पहली जनवरी को। इसके मनाने का तरीक़ा यह था:—बड़े दिन के रोज़ शाम को जितने पादरी होते थे गिरजा घर में इकट्ठा होकर एक दम से चिल्लाते थे "बड़ा दिन" और फिर मस्त हो जाते थे। औरतें मरदों का रूप धारण करती थीं और मर्द औरतों का और एक दूसरे से लपट कर नाचते गाते थे। शराब पीते थे और चिल्लाते थे। गन्दे से गन्दे गाने गाये जाते थे। गन्दे से गन्दे और अश्लील से अश्लील दृश्य दिखाये जाते थे। साधारण मनुष्य तो आपे से बाहर भी रहता था। पादरी लोग और समझदार आदमी अपना अपना रूप बदल कर, औरत मरद और मरद औरत बनकर चेहरों पर नक़ाब डालकर इकट्ठा होते थे। गिरजा घर, जहां परमेश्वर का नाम लेना चाहिये, शराबख़ाना बन जाता था। यहीं

ताश खेला जाता था और लोग जुवा खेलते थे। जूतों को आग में जलाते थे जिससे असह्य दुर्गन्ध उठती थी। सब लोग मिलक जो जिस को पाता था लिपटा कर नाचता था चूमता था और गन्दी से गन्दी गालियों की गीतें गाता था इसके बाद यह सब लोग गाड़ी पर सवार हो कर शहर या गांव की सड़क पर निकलते थे और जनता को देख कर जो इकट्ठा रहती थी गालियां बकने लगते थे। जनता इन्हें गालियां देती थी और इस तरह से यह त्योहार समाप्त होता था। यह हाल इङ्गलैण्ड का और अन्य पाश्चमीय देशों का १८ वीं सदी के पहले का है। मैं इस वर्णन को बहुत विस्तार नहीं देना चाहता और न हर एक चीज़ को तफ़सील वार और स्पष्ट बयान करने में ही मुझे बहुत शिष्टता मालूम होती है किन्तु मैं पाठकों को यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि यूरोप में ही नहीं, सारे संसार के हर एक समाज में असभ्यता के ज़माने से इस प्रकार की घृणित कुप्रथायें पाई जाती थीं। Salurnatia, Lupcrealia; Festum Stultorum, Matrolania Festa; Liberalia इत्यादि त्योहार जो पश्चिमीय देशों में एक न एक समय पर मनाये जाते थे होली के समान ही अश्लीलता पूर्ण थे। मिश्र देश के इतिहास में यहां तक लिखा है कि मिश्री अपनी होली के त्योहार पर नावों मे बैठ कर हज़ारों की तादाद में एक मन्दिर में देवता के दर्शन के लिये जाया करते थे। रास्ते में स्त्रियां और पुरुष गाते थे।

जहां कहीं रास्ते में कोई गांव या क़स्बा पड़ता था यह उतर पड़ते थे कुछ औरतें गाने लगती थीं, कुछ उस गांव के मरदों और औरतों के देखते ही उन्हें गालियां सुनाने लगती थीं और कुछ स्त्रियां नङ्गी होकर उनके सामने खड़ी हो जाया करती थीं।

हमारे देश में भी होली के त्योहार पर जो अश्लीलता बरती जाती है अन्य देशों से कम नहीं है। भेद सिर्फ़ इतना है कि यह अश्लीलता अन्य राष्ट्र अपनी असभ्यता के ज़माने में रवा रखते थे किन्तु हम सभ्य ही नहीं, ऋषि सन्तान होने का दावा करते हुये इन अश्लीलता को बरतते हैं। होली का त्योहार एक प्रकार का स्त्रीत्व के अपमान करने का एक साधन हो रहा है। पतित लोग इस त्योहार से फ़ायदा उठाते हैं। समझदार लोग भी परम्परा के फंदे में फंस कर इस से सहयोग करते हैं और इसका समर्थन करते हैं। निस्सन्देह यह बहुत दुःख की बात है। जब तक हमारे कर्म और आचार व्यवहार असभ्यों और पिशाचों के समान है। अपने मुंह से हम ऋषि सन्तान ही नहीं साक्षात ब्रह्म ही होने का क्यों दावा न करें, संसार की नज़रों में--और वास्तव में हम वही रहेंगे जो हैं अर्थात् असभ्य और पतित।

अनन्त चतुर्दशी

यह व्रत भादों के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को होता है। इस व्रत में अनन्तदेव की पूजा की जाती है। इस सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि जिस समय युधिष्ठिर जुए में राज पाट हार कर वनवास में भेज दिये गये और वे अपने भाइयों और द्रौपदी के सङ्ग वन में रहने लगे तो उनके वनवास हो जाने की कथा सुन कर श्रीकृष्ण उनसे मिलने के लिये वन में गये। कृष्ण को देख कर युधिष्ठिर को कुछ शांति हुई और उन्होंने कृष्ण से पूछा कि मैं इस दुःख से कैसे पार पाऊं। कृष्ण ने उन्हें इसी व्रत के रखने की सलाह दी। इस पर युधिष्ठर ने पूछा कि अनन्तदेव आखिर किस देवता का नाम है और इसका क्या माहात्म्य है? इस पर श्रीकृष्ण ने यह वर्णन किया कि अनन्त मेरा नाम है और इस दिन मेरी पूजा होती है। इसके सम्बन्ध में कृष्ण जी ने युधिष्ठिर जी को यह कथा सुनाई। उन्होंने कहा कि पहले सतयुग में सुमंत नाम का ब्राह्मण था। उसकी स्त्री का नाम दीक्षा था। इन दोनों के शीला नाम की कन्या पैदा हुई। जब शीला कुछ बड़ी हुई तो उसकी माता

दीक्षा का देहान्त हो गया और सुमन्त ने कर्कशा नाम की स्त्री से अपना दूसरा विवाह कर लिया। शीला थोड़े दिनों में विवाह करने के योग्य हुई। सुमन्त ने इसका विवाह कौण्डिन्य नाम के ब्राह्मण से कर दिया। दायज के समय सुमन्त ने कर्कशा से कहा कि दामाद घर में आया है उस को कुछ दायज देना चाहिये। कर्कशा इस पर बड़ी क्रोधित हुई। मकान की दीवारें फोड़ डालीं और बहुत साधारण भोजन और ईंट पत्थर बांध दिये और कहा कि दामाद को दे आओ। कौण्डिन्य ये बातें सुन कर बहुत दुःखी हो विदा होकर चला आया। कौण्डिन्य को अपने घर जाते समय मार्ग में यमुना जी मिलीं। यहां पर शीला ने दोपहर के समय लाल वस्त्र पहने हुये बहुत सी स्त्रीयों को यमुना स्नान करते हुए और पूजा करते हुए देखा। शीला गाड़ी से उतर कर इनके पास गई और पूछा कि यह कौन सी पूजा है? स्त्रियों ने बतलाया कि यह अनन्त व्रत है और हम लोग अनन्त भगवान की पूजा करते हैं। शीला ने भी यही पूजन किया और विधि के अनुसार एक डोरे में चौदह गांठें बांध केशर में रंग उसका पूजन कर अपने हाथ में बांध लिया और गाड़ी में बैठ कर अपने घर आई। उसी क्षण उस अनन्तव्रत के कारण उसका घर, गौ, धन, धान्य से परिपूर्ण हो गया और कौण्डिन्य, शीला आदि सपरिवार आनन्द से रहने लगे। एक दिन कौण्डिन्य ने शीला के हाथ में अनन्तव्रत में पूजन किये हुए डोरे को देखा।

उसने समझा कि शीला ने मुझे वश में रखने के लिये यह कोई यन्त्र बांध रक्खा है। उसने उसे छीन कर आग में डाल दिया। शीला हाहाकार करके उठी और आग मे उस डोरे को निकाल दूध में भिगो फिर बांध लिया। इस कर्म से कौण्डिन्य की धीरे धीरे सारी सम्पदा नष्ट होने लगी चोर लोग माल असबाब उठा ले गये। घर में दरिद्रता आ गई। रिश्तेदारों ने साथ छोड़ दिया। कौण्डिन्य जब बहुत दुःखी हुआ तो उसने शीला से कहा कि मैं अब ज़िन्दगी से आजिज़ आ गया हूं। कुछ समझ में नही आता कि क्या करूं। शीला ने कहा कि तुमने अनन्त भगवान का उस दिन निरादर किया था उसी का परिणाम तुम्हें मिला है। अनन्त भगवान को प्रसन्न करो तो तुम्हें सब कुछ फिर मिल सकता है। इस पर कौण्डिन्य घर से अनन्त भगवान की तलाश में निकल पड़ा और वन में वायु खाता हुआ उनकी खोज करने लगा। उसने वन में भ्रमण करते करते एक बड़ा आमका वृक्ष देखा जिस में फूल लगे थे; किन्तु उस पर कोई चिड़िया नहीं थी और उस में सैकड़ों कीड़े किलबिला रहे थे। कौण्डिन्य ने इस वृक्ष से पूछा कि तुमने अनन्त भगवान को कहीं देखा है? उसने उत्तर दिया कि नहीं देखा। फिर यह ब्राह्मण और आगे बढ़ा तो एक बछड़े सहित गाय देखी जो वन में फिरती थी। ब्राह्मण ने इस गायसे वही प्रश्न किया और वही जवाब पाया। आगे एक बैल देखा वह हरी हरी घास चर रहा था, इससे भी वही सवाल

किया और वही जवाब पाया । आगे बढ़ा तो दो मनोहर झीलें देखीं जिनका पानी एक दूसरे में हिलोरें मार कर जा रहा था और कमल और कुमुद से सुशोभित था । इनसे भी ब्राह्मण ने अनन्तभगवान का पता पूछा और इन्होंने भी यही जवाब दिया कि हमें नहीं मालूम । आगे बढ़ा तो एक गदहा और एक मस्त हाथी खड़े देखा । इनसे ब्राह्मण ने पूछा—भाइयों तुमने कहीं अनन्तभगवान को देखा है ? उन्होंने भी वही जवाब दिया । जब इससे वह निराश होगया तो वहीं बैठ गया और फन्दा लगा कर मर जाने के लिये तैयारी करने लगा । यह देख कर बृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण करके अनन्तभगवान ने स्वयं उसका हाथ पकड़ लिया और उसको एक गुफा में ले गये । वहां पर उसे अनन्त भगवान के नरनारायण रूप के दर्शन हुए । ब्राह्मण ने साष्टांग दण्डवत किया और उसने कहा महाराज कोई उपाय बताओ जिससे मेरा कष्ट दूर हो । भगवान अनन्तने उत्तर दिया कि तुमने मेरा अपमान किया था । उसी कारण तुम्हारी सम्पदा का नाश हुआ । अब घर जा कर तुम चौदह वर्ष तक अनन्त भगवान की पूजा करो तुम्हारा पाप नाश होगा । ब्राह्मण ने इस पर फिर पूछा कि महाराज यह तो बताओ कि रास्ते में आम का बृक्ष, बैल, झील आदि जो मुझे मिले थे वे कौन थे ? इस पर बृद्ध ब्राह्मण ने कहा कि हे कौण्डिन्य ! वह आम का बृक्ष पूर्व जन्म में वेदविद्या विशारद था । इसने शिष्यों को वेदविद्या का ज्ञान नहीं दिया था इसलिये इस जन्म में बृक्ष हुआ । और जो गऊ देखी थी

वह भूमि थी; इसने पहले बीज हरण किया था। तुमने जो बैल देखा था वह धर्म रूप था, उसने यथावत् धर्म की व्यवस्था नहीं की थी इसलिये बैल हुआ। जो दो झीलें थीं वे पहले दो बहनें थीं, जो अपने अपने पाप पुण्यों को एक दूसरे से कहती थीं। इससे दोनों तलइयां हुईं। इन दोनों ने अतिथि, ब्राह्मण और दुर्बल को कभी भी भिक्षा नहीं दी। जो तुमने गदहा देखा वह मूर्तिमान क्रोध था और वह हाथी मद था। वह ब्राह्मण अनन्त भगवान ही थे। और जो गुफा तुमने देखी वह संसार सागर था। यह बात कह कर वह वृद्ध ब्राह्मण अन्तर्धान हो गया कौण्डिल्य अपने घर वापिस आया और अपने घर को फिर सम्पदा और समृद्धि से परिपूर्ण देखा।

अन्नकूट उत्सव या गोवर्द्धनोत्सव ।

कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा को यह उत्सव होता है। इस दिन अन्नकूट भगवान की पूजा होती है और गोवर्द्धन की भी पूजा की जाती है। सनत् कुमार संहिता में यह लिखा है कि एक दिन कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा को कृष्ण जी गऊ चराते चराते गोवर्द्धन के निकट जाकर क्या देखते हैं कि सब गोप; ग्वाल और गोपियां गोवर्द्धन के चारों ओर इकट्ठे हैं और नाना प्रकार के भोजन वहां इकट्ठे कर रक्खे हैं। श्रीकृष्ण ने उन से पूछा कि हे गोप ग्वालों! तुम इस समय किस का पूजन कर रहे हो? उन्होने उत्तर दिया कि हे कृष्ण! यह दिन इन्द्र की पूजा का है। बहुत दिनों से गोकुल में यह पूजा चली आती है। श्रीकृष्ण ने कहा कि भाई गोपो यह तुम्हारी बड़ी भूल है कि तुम जो देवता खाते नहीं उन्हें तो भोजन देते हो और जो खाते हैं उन्हें भोजन नहीं देते। इस पर गोपो ने कहा कि हे श्रीकृष्ण! तुम ऐसा न कहो। इन्द्र हम लोगों को पानी देते हैं हमें धन धान्य गऊ इन्हीं की कृपा से प्राप्त होते हैं। श्रीकृष्ण ने कहा यह बात भी ठीक नहीं है क्योंकि तुम्हें साक्षात् अन्न देने वाला तो गोवर्द्धन पर्वत ही है। यही

तुम्हारे लिये जल की वर्षा करता है और तुम्हारी गउओं की रक्षा करता है। यह तुम्हारे भोजन को भक्षण भी करेगा। इसी की तुम पूजा करो। श्रीकृष्ण की यह बात सुन कर गोप गोपीजन आपस में बात चीत करने लगे और यह सोचने लगे कि श्रीकृष्ण की बात मानें या न मानें। अन्त में यह निश्चित हुआ कि अगर गोवर्द्धन हमारे अर्पित भोजन को खाले तो श्रीकृष्ण की अज्ञानुसार इस की पूजा की जाय और अगर न खाय तो इन्द्र की। इसलिये थोड़ी देर के बाद नाना प्रकार के स्वादिष्ट भोजन बना कर गोप ग्वालों ने गोवर्द्धन के सामने रक्खे। फिर कृष्ण ने इनसे कहा कि हे ग्वालों! तुम अपनी आंखें मूंद कर गोवर्द्धन का ध्यान करो। जब ग्वालों ने आंखें मूंदीं तो श्रीकृष्ण स्वयं गोवर्द्धन रूप होकर सब भोजन खा गये। जब ग्वालों ने आंखें खोलीं तो सब भोजन ग़ायब देख कर बहुत चकित हुए और बड़ी श्रद्धा से गोवर्द्धन की पूजा की।

नारद जी ने यह ख़बर इन्द्र को पहुंचा दी। इन्द्र यह सुन कर कि उन के स्थान पर गोवर्द्धन की पूजा हुई है, बड़े नाराज़ हुए और अपने यहां के बड़े बड़े मेघों को यह आज्ञा दी कि जाकर गोकुल को बहा दो। थोड़ी देर में मूसलाधार वर्षा आरम्भ हो गई और सारा गोकुल व्याकुल हो गया। गोप-ग्वाल कृष्णजी के पास त्राहि त्राहि करते हुए पहुंचे। कृष्ण ने कहा कि गोवर्द्धन की पूजा करो गोवर्द्धन ही तुम्हारी

रक्षा करेगा। यह सुन कर सब गोप-ग्वाल और श्रीकृष्ण गोवर्द्धन के समीप आये और ज्योंही ग्वालों ने आंखें मूंद कर गोवर्द्धन का ध्यान किया, कृष्णचन्द्र ने झट से गोवर्द्धन को अपनी उंगली से उठा लिया। सब गोप-ग्वाल उस के नीचे आ गये। इन्द्र ने ज़ोरों से वर्षा आरम्भ की, यहां तक कि गोकुल के अतिरिक्त और सारे गांव नाश होने लगे। नारद जी ने यह समाचार ब्रह्मा जी से जा सुनाया और कहा कि इन्द्र सारी सृष्टि का नाश कर रहे हैं। ब्रह्माजी यह समाचार सुन कर अपने हंस पर सवार होकर इन्द्र के पास आये और पूछा कि मृत्यु लोक में क्या कोई दैत्य पैदा हो गया है जो आप सृष्टि का नाश कर रहे हैं? इन्द्र ने कहा नहीं, यह बात नहीं है। गोकुल निवासियों ने हमारी पूजा का निरादर किया है उन को हम दण्ड देना चाहते हैं। ब्रह्मा ने तब इन्द्र को श्रीकृष्ण का दर्शन कराया। और कहा देखो जब साक्षात् विष्णु भगवान श्रीकृष्ण का रूप धारण कर के गोकुल की रक्षा कर रहे हैं तो तुम उनका कैसे नाश कर सकते हो? इन्द्र को तब पश्चात्ताप हुआ और उन्होंने श्री कृष्ण से क्षमा प्रार्थना की।

इस के बाद श्री कृष्ण ने कहा कि हे इन्द्र! तुम इन गोपों को क्षमा करो और यह वर दो कि ये गोवर्द्धन की ही पूजा किया करें। इन्द्र ने इस को सहर्ष स्वीकार किया! और उसी समय से अन्नकूट भगवान और गोवर्द्धन की पूजा आरम्भ हो गई।

यमद्वितीया या भ्रातृद्वितीया

कार्तिक शुक्ल पक्ष की द्वितीया को यमद्वितीया कहते हैं। इसके सम्बन्ध में यह कथा कही जाती है कि पहले किसी समय में यमुना जी नित्य प्रति यमराज से जाकर प्रार्थना करती थीं कि भाई तुम मेरे घर अपने सब गणों के साथ भोजन करने को चलो। यमुना जी की इस प्रार्थना को यमराज टालते रहे। कभी कहते थे कि आज चलेंगे कभी कल। किन्तु जब इसी तरह बहुत दिन बीत गये और यमराज नहीं आये तो यमुना जी ने ज़बरदस्ती यमराज को अपने यहां बुलाया। जिस दिन यमराज यमुना जी के यहां आये उस दिन कार्तिकी द्वितीया थी। यमुना जी ने अपने भाई यमराज का बड़ा सत्कार किया। चलते समय यमराज ने अपनी बहन से कहा कि कुछ मांगो इस पर यमुना जी ने कहा कि भैया मैं यही मांगती हूं कि तुम नित्य वर्ष भर पर इसी दिन मेरे यहां भोजन करने आया करो। यमराज ने आने की प्रतिज्ञा की और यह भी कहा कि केवल इतना ही नहीं इस दिन जो बहन अपने भाई को बुला कर भोजन करायेगी उस को वैधव्य कभी भी न होगा। हर एक मनुष्य का कर्त्तव्य है कि इस दिन अपनी बहन के यहां भोजन करे और बहिन को वस्त्र और आभूषण दे। जो बहिनें इस यमद्वितीया को यथा विधि मनायेंगी उनके भाई चिरायु होंगे।

अक्षय तृतीया

वैशाख कृष्ण पक्ष तृतीया को होती है। कहते हैं कि परशुराम इसी दिन पैदा हुए थ और त्रेतायुग का भी इसी दिन आरम्भ हुआ था। इस दिन तिलों से मृत पितरों का श्राद्ध किया जाता है। ब्राह्मण को इसदिन एक कलश जल एक पंखा और एक जोड़ी जूता दान दिया जाता है ताकि गरमी में स्वर्ग में यह चीज़े उन्हें मिल जाये। गरमी इसी दिन से आरम्भ हो जाती है। इस दिन गौरी की अन्तिम पूजा भी होती है। सधवा स्त्रियां और कन्याएँ इसदिन गौरी पूजा करती हैं और मिष्टान्न फल और भीगे हुए चने बांटती हैं।

महात्म्य और पौराणिक कथा:—व्रतराज में लिखा है। किसी समय एक बड़ा महोदय नाम का वैश्य हुआ। उसने एक दिन किसी पंडित के कथा बाचन करते समय अक्षयतृतीया का महात्म सुना कि यदि यह तृतीया बुधवार के दिन रोहिणी नक्षत्र युक्त हो तो यह अत्यन्त फल देनेवाली होती है। महोदय वैश्य ने यह सुन कर गंगा में स्नान किया और पितृ देवता का तर्पण किया। घर में आकर अन्नोदक सहित कटोरों का, पखों का जल पूर्ण, अन्न, व्यञ्जन, छत्र सहित घटों का दान किया और जब गेहूं लवण सत्तू दध्योदन और इक्षु विकार (गोड़ के बने हुए पदार्थ) सुवर्ण सहित ब्राह्मण को दिये। जब यह वैश्य कुछ दिनों बाद बैकुण्ठवासी हुआ तो इस व्रत के प्रताप से कुशवती नाम नगरी में राजा हुआ और उसकी अक्षय संपत्ति हुई। इसी से इस पर्व का नाम अक्षय-त्रितीया पड़ा।

सोमवती अमावस्या ।

जब अमावस्या सोमवार को पड़ती है तब यह तिथि मनाई जाती है। पीपल के वृक्ष के नीचे जाकर सौभाग्यवती स्त्रियां वृक्ष की १०८ प्रदक्षिणा करती हैं। १०८ फल, मिष्ठान, या पैसे रुपये, लेकर इस दिन उसी वृक्ष के नीचे फेरी देती हैं। स्त्रियां इस लिये तेल नहीं छूतीं। दान की हुई चीज़ ब्राह्मणों को दी जाती है। सुहाग के पुष्ट करने और संतति की प्राप्ति के लिये यह व्रत किया जाता है।

पौराणिक कथा:—महाभारत युद्ध के समाप्त हो जाने के बाद शर शय्या पर पड़े हुए भीष्म के पास युधिष्ठिर ने जाकर कहा कि हे पितामह इस युद्ध में कुरुवंश के समान मुख्य लोग मर गये। बचे हुये राजाओं को भी कोपी भीमसेन ने मार डाला भारत वंश में केवल हम ही शेष हैं। सन्तति के विच्छेद को देखकर हमारे हृदय को बड़ा सन्ताप होता है। उत्तरा बहू के गर्भ से उत्पन्न हुआ परिक्षित भी अश्वत्थामाके अस्त्र से दग्ध हुआ इससे अपने वंश के नाश को देखकर मुझे दूना दुःख है। सो हे पितामह ! मैं क्या करूं कि जिससे चिरंजीवी संतति प्राप्त हो। तब श्री भीष्मजी ने उत्तर दिया, कि जिस दिन सोमवार के दिन अमावस हो उस दिन पीपल के पास जाकर जनार्दन का पूजा करें * और पीपल की १०८ परिक्रमा करे। १०८ ही रत्न

* तस्यामश्वत्थमागत्यपूजयेच्चजनार्दनम्। —व्रतराज, ४४३

या सिक्के या फल को लेकर प्रदक्षिणा करे। हे राजन्! यही व्रत तुम उत्तरा से कराओ तब उसका मृगगर्भ जी जायगा। और तीनो लोगों मे विख्यात और गुणवान होगा। तब युधिष्ठिर ने पूछा कि कृपा करके बतलाइये कि यह व्रत मनुष्य लोक में किसने प्रकाश और किसने इसको किया? भीष्मजी ने उत्तर में कहा कि इस भूमि में कांति नाम की पुरी थी। जिसमें रत्नसेन नाम का राजा राज करता था। वहां देवस्वामी नामक ब्राह्मण रहता था। इस ब्राह्मण की धनवती नाम स्त्री थी। इस ब्राह्मण के इस पत्नी से सात पुत्र और एक कन्या पैदा हुए। लडकों का तो विवाह हो गया था किन्तु लड़की का तो विवाह नहीं हुआ था। ब्राह्मण योग्य वर की तलाश में था। एक दिन एक बड़ा तेजस्वी ब्राह्मण भिक्षा मांगने आया। बहुओं ने जब इस ब्राह्मण को पृथक पृथक भिक्षा दी उस समय इस ब्राह्मण ने उन्हें सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद दिया। किन्तु जब गुणवती कन्या ने भिक्षा दी तो उस ब्राह्मण ने 'धर्मवती' हो ऐसी आशीश दी। गुणवती ने अपनी माता से जाकर जो आशीर्वाद ब्राह्मण ने उसे दिया था और जो उसकी भावजों को दिया था सब कह सुनाया। माता ने उस ब्राह्मण के पास आकर इस का कारण पूछा कि गुणवती को सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद क्यों नहीं दिया! ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि गुणवती को भांवर के समय ही वैधव्य प्राप्त होगा इसलिये मैंने ऐसा वरदान दिया है। इस वचन को सुनकर धनवती

को बड़ी चिन्ता हुई और उसने बारम्बार प्रणाम करके ब्राह्मण से प्रार्थना की कि इसका कोई उपाय बताइये। तब भिक्षुक ने कहा कि जब तेरे घर में सोमा आयें तो उसी समय उस के पूजन से वैधव्य का नाश होगा। धनवती ने पूछा कि सोमा कौन जाति है और कहां रहती है? ब्राह्मण ने कहा कि यह जाति की धोबिन है और सिंहलद्वीप की रहने वाली है वह जब आवेगी तब तेरी लड़की वैधव्य भङ्ग होगा। यह कह कर ब्राह्मण भिक्षा मांगता मांगता अन्यत्र चला गया। माता ने अपने पुत्रों को बुला कर कहा कि तुम लोग अपनी बहिन गुणवती को साथ लेकर सिंहलद्वीप जाओ और सोमा को बुला लाओ। लड़कों ने दुर्गम मार्ग की चिन्ता करके जाने से इन्कार कर दिया, किन्तु पिता के कुपित होने पर शिवस्वामी नाम का सब से छोटा लड़का अपनी बहिन को लेकर रवाना हो गया। बहुत दिन सफ़र करने के बाद वह समुद्र के तट पर पहुंचा और वहां से समुद्र को पार करने की चिन्ता करने लगा। समुद्र के तट पर ही एक वट का वृक्ष था। उस वृक्ष पर गिद्धों ने बच्चे रख छोड़े थे उसी वृक्ष के नीचे बैठकर गुणवती और शिवस्वामी ने सारा दिन व्यतीत कर दिया। सायंकाल को गिद्ध जब अपने बच्चों को चारा चुगाने लगा तो बच्चों ने नहीं खाया कारण पूछने पर बच्चों ने कहा कि जब तक वृक्ष के नीचे बैठे हुए दोनों मनुष्य भोजन नहीं करते, वे भी भोजन नहीं करेंगे। इसपर गिद्धराज ने

आकर शिवस्वामी से उनका वृत्तान्त पूछा। मालूम होने पर गिद्धराज ने उन्हें दूसरे दिन प्रातः काल सोमा धोबिन के यहां पहुंचा देने का वचन दिया। दूसरे दिन अपनी प्रतिज्ञा अनुसार गिद्धराज ने गुणवती और शिवस्वामी को सिंहलद्वीप सोमा धोबिन के यहां पहुचा दिया। यह दोनों सोमा धोबिन के घर में साल भर तक बराबर दास-दासी का काम करते रहे और घर लीपते बुहारते रहे। घरकी असाधरण सफाई देख कर सोमा ने एक रोज़ पूछा कि आखिर मेरे घर की नित्य प्रति सफ़ाई कौन कर जाता है। बहु ओंने कहा हम नहीं जानतीं, हमने स्वयं तो कभी बुहारी दी नहीं और न लिया। एकदिन छिपकर देखा तो ब्राह्मण-कन्या को घर के आंगन की बुहारी देते हुए और ब्राह्मण वालक को लीपते हुए पाया। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने इन से पूछा कि ब्राह्मण होकर वे इस प्रकार शूद्र की सेवा क्यों करते थे? उन्होने अपनी कथा सुनाई और उससे प्रार्थना की कि वह उनके साथ चले। सोमा चलने पर राज़ी हो गई। चलते समय उसने अपने घर के स्त्री पुरुषों को यह आदेश दिया कि मेरी अनुपस्थीति में यदि कोई मर जाय तो उसकों ज्यों का त्यों रखना। सोमा गुणवती के घर आई। गुणवती का विवाह रुद्र शर्मा से निश्चित होचुका था। भाँवरें हो ही रही थीं कि रुद्रशर्मा का एक दम प्राणान्त हो गया। सारे घर में रोना पीटना होने लगा। किन्तु सोमा को ज़रा भी चिंता नहीं हुई; उसने गुणवती को व्रतराजका फल

संकल्प करके दिया जिसके प्रभाव से रुद्र शर्मा निद्रा से जागने के समान उठ खड़ा हुआ। जब सोमा अपने घर वापस आई तो वहां उसके पुत्र, स्वामी और दामाद सब मर चुके थे। उस दिन सोमवती अमावस्या थी जिसे मृत संजीवनी तिथि भी कहते हैं। रास्ते में उसे एक स्त्री रुई से लदी हुई मिली जो दबी जा रही थी इन दोनों ने इससे बहुत प्रार्थना की बोझ में कुछ सहारा दे दे किन्तु सोमा ने इन्कार कर दिया और कहा कि आज सोमावती अमावश्या है इस दिन रुई या मूली कुछ भी नहीं छुआ जाता। सोमा ने तुरन्त ही पीपल के वृक्ष के नीचे जाकर हाथ में शक्कर लेकर वृक्ष की १०८ प्रदक्षिणाएँ की और विष्णु भगवान का पूजन किया। पूजन के प्रभाव से उसके पुत्र, दामाद और कन्या भी सब जी उठे। सोमा जब अपने घर आई तो सारा हाल सुना। बहुओं ने अपने कुटुम्बिओं के मरने और उनको फिर से जीने का कारण पूछा तब उसने बताया कि मैंने गुणवती कन्या को, जिसका सुहाग खण्डित था व्रतराज का फल प्रदान किया इससे उसका वैधव्य तो नष्ट हो गया किन्तु मेरे कुटुम्ब का सुहाग जाता रहा। फिर जब सोमावती आमावश्या को पूजन किया उसके प्रभाव से सुहाग उबर आया। तभी से इस पर्व का प्रचार हुआ है और आज हिन्दू मात्र इसे मानता है !!